शान्ति-दूत नेहरू

वीरेन्द्र मोहन रतूड़ी

उमेश प्रकाशन
२, नाथ मार्केट, नई सड़क, दिल्ली-६

◉ प्रकाशक

उमेश प्रकाशन

५, नाथ मार्केट, नई सड़क, दिल्ली-६

◉ मुद्रक

प्रिन्ट आर्ट

नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२

◉ संस्करण

१९७१

◉ मूल्य

तीन रुपये

Shanti-Doot Nehru (Biographical Sketch of Nehru)

by

Birendra Mohan Raturi

Price : Rs. 3·00

यह पुस्तक

…२७ मई,१९६४ की दोपहर को महामानव शान्ति-दूत जवाहरलाल नेहरू के निधन से एक मन्वन्तर समाप्त हो गया।

जीवन मे उन्माद, प्राणो मे पीडा, मन मे आत्मोत्सर्ग का तेज और चेहरे पर आशा-निराशा की धूप-छाव लिए भारत-माता का यह लाडला सपूत जवाहरलाल हमेशा चलता रहा, चलता रहा—पहले भारत-माता को गुलामी के लौह-पाशो से मुक्त करने के लिए, और बाद मे भारत की जनता को प्रगति के पथ पर ले जाने, दुनिया को युद्ध के भयावह परिणामो से बचाने तथा समस्त मानव-जाति को प्रेम और शान्ति का सदेश देने के लिए। कभी शहरो मे गया, कभी गावों मे; कभी विमान से गया, कभी जहाज से, कभी रेल से, कभी मोटर से ; कभी पैदल, कभी हेलिकाप्टर से , कभी ऊट से, कभी याक से ; कभी टट्टू पर, कभी बैलगाड़ी से ; कभी विश्वनेताओ से मिला, कभी मामूली किसानों से, कभी पूजी-पतियों से मिला, कभी मजदूरो से ; कभी वैज्ञानिको से मिला, कभी इंजीनियरो से; कभी बूढो से मिला, कभी बच्चो से।

भारत माता का वही लाडला सपूत २७ मई, १९६४ की दोपहर को चल दिया अनन्त यात्रा पर, वायु-मार्ग से, जाने किस लोक के देवताओ से मिलने !

आज नेहरू हमारे बीच नही हैं, लेकिन उनकी अमर कहानी, उनका अमर प्यार और सदेश हमारे पास हैं।

नेहरू नही रहे—नेहरू अमर हैं, उसी महामानव नेहरू की कहानी इस पुस्तक में है।

यह जीवनी है या उपन्यास—यह प्रश्न नहीं उठता, क्योंकि युगपुरुष नेहरू का जीवन किसी भी उपन्यास से कम रुचिकर नहीं रहा। इस कथावस्तु में अनेक कथोपकथन हैं। सभी घटनाएं प्रामाणिक हैं और उनका उल्लेख अनेक पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं में है। जो कथोपकथन यहां दिए गए हैं, वे या तो मूल हैं या अंग्रेजी के अनुवाद। सही-सही वाक्य क्या थे, यह बताना अत्यन्त कठिन है, लेकिन विद्वज्जनों ने अपने संस्मरणों आदि में जिन वाक्यों का उल्लेख किया, उन्हें ज्यों-का-त्यों अथवा उनका सही-सही अनुवाद देने का प्रयत्न किया गया है। हां, अन्दाजे-बयां अपना है।

जिन पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं से सहायता ली गई, उनका अत्यन्त आभारी हूं। उनमें प्रमुख ये हैं: श्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा लिखित—मेरी कहानी, आज़ादी के बयह कदम, स्वाधीनता और उसके बाद, कुछ पुरानी चिट्ठियां, नेहरू : ए पॉलिटिकल बायग्राफी—माईकेल ब्रीचर, जवाहरलाल नेहरू—फ्रैंक मॉरिस, पण्डित नेहरू—देवीप्रसाद धवन 'विकल'; नेहरू की रूस यात्रा—राजकुमार; नेहरू विश्व-शान्ति की खोज में—ओमप्रकाश गुप्त; नेहरू अभिनन्दन-ग्रन्थ; एम्बेसडर्स रिपोर्ट—चेस्टर बोल्स, मेरी कौन सुनेगा—महावीर त्यागी, गांधी की कहानी—लुई फिशर; भारतीय स्वतन्त्रता का इतिहास—इन्द्र विद्यावाचस्पति। पत्र-पत्रिकाएं—युवक-कांग्रेस, मजदूर संदेश, चरित्र-निर्माण जीवन-साहित्य, नवनीत, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, नवभारत-टाइम्स, टाइम्स आफ इण्डिया, हिन्दुस्तान टाइम्स, हिन्दुस्तान तथा ब्लिट्ज़।

और अन्त में आभारी हूं—भाई गोपालजी मेहरोत्रा का, जिन्होंने चित्र एवं मैटर एकत्र करने में सहायता दी; तथा उमेश प्रकाशन के भाई रमेश सन्त और शिव सन्त तथा चित्रकार जगदीश चड्ढा का, जिनके अथक प्रयास से पुस्तक इस रूप में आई।

आर ५५१, शकर रोड —वीरेन्द्र मोहन रतूड़ी
न्यू राजेन्द्र नगर,
नई दिल्ली।

बहुप्रशंसित
किशोर-उपन्यास-माला के पुष्प

सचित्र, सरस तथा स-उद्देश्य

वीर रस से पूर्ण

कर्ण

अर्जुन — भीष्म

हल्दी घाटी — श्री कृष्ण

खूब लड़ी मर्दानी — वीर कुँवरसिंह

गुरु गोविन्द सिंह — सम्राट् शिलादित्य

चित्तौड़गढ़ की रानी — चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य

वीरांगना चेन्नम्मा — महाबली छत्रसाल

गढ़मण्डल की रानी — बाजीराव पेशवा

महाबली इन्द्र — चन्द्रगुप्त मौर्य

सम्राट् अशोक — तात्या टोपे

जय भवानी — वीर कुणाल

दुर्गादास — उदयन

चक्रवर्ती दशरथ

अभिमन्यु

अन्य महापुरुषों पर आधारित

महाकवि कालिदास — गुदड़ी का लाल · लालबहादुर

शान्ति-दूत नेहरू — मदुरा का मीनाक्षी

ऋषि का शाप — देवता हार गए

स्वामी दयानन्द — आचार्य चाणक्य

गुरु नानक देव — मीरां बावरी

गुरु अंगद देव — संत कबीर

गुरु अमरदास — रवि बाबू

गौतम बुद्ध — विश्वामित्र

रेखाओं का जादूगर

बापू

शेक्सपियर के नाटकों पर आधारित

तूफान | हैमलेट | भूल पर भूल
मैकबेथ | राजा लियर | रोमियो जूलियट
जूलियस सीज़र | राई से पहाड़ | वेनिस का सौदागर
ऑथेलो | निराशा | जैसा तुम चाहो

शिकार, ज्ञान-विज्ञान, 'अरेबियन नाइट्स' पर आधारित

मगरमच्छ का शिकार | दरियाबार द्वीप की शहज़ादी
दैत्याकार पक्षी का शिकार | हाथी का शिकार | अलीबाबा : चालीस-चोर
रूपा और लल्ली | बाघ का शिकार | उड़ने वाला घोड़ा
ह्वेल का शिकार | पूपू | अरब के मसखरे

साहसिक कहानियां एवं लोककथाएं

रंग बिरंगी परियां
हमारे बहादुर जवान
हमारे बहादुर हवाबाज
सदाचार की कहानियां
विश्व की साहसिक गाथाएं
क्रान्ति की कहानियां
देश-देश की परियां भारत आईं
भाई-बहन की लोक-कथाएं
तीज-त्योहार की लोक कथाएं
भारत के साहसी वीरों की गाथाएं
शिकार की रोमांचकारी सच्ची गाथाएं
साहस-रोमांच की सच्ची गाथाएं
साहसी समुद्री वीरों की सच्ची गाथाएं
नेफा और लद्दाख के साहसी वीरों की गाथाएं

१

अनन्त यात्रा पर

भोर हो गई है। तीन मूर्ति मे प्रधानमंत्री-भवन के वृक्षों की कांपती पत्तियों पर बाल-सूर्य की गुलाबी किरणें अठखेलियां करने लगी हैं ; टहनियों पर चिड़ियां चहचहा रही हैं, उद्यान की हरी दूब में चमक आ गई है और गुलाब के लाल-लाल फूल नव-जात विहान का स्वागत कर रहे हैं।

रात बीत चुकी है, भोर हो गई है।

कल रात तीन मूर्ति के इसी भवन में जब लगभग सभी लोग गहरी नींद में डूबे थे, तब भी भवन के एक कमरे में वह, उम्र में वृद्ध लेकिन कर्मक्षेत्र में उत्साही तरुण, मेज पर सिर झुकाए कागज-पत्र देखने में लीन था। रात काफी बीत गई थी, चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। तब उस व्यक्ति ने अपनी कलाई-घड़ी की ओर देखा। आधी रात हो चुकी थी।

"मैंने सब फाइलें निबटा दी हैं," उस व्यक्ति ने अपनी कुर्सी से उठते हुए अपनी चिरपरिचित मुस्कान बिखेरते हुए अपने सहायक से कहा।

वह उठा। फिर अचानक उसकी निगाह मेज की ओर चली

गई। मेज पर एक पैड रखा था और उस पैड पर हाथ से लिखी कुछ पंक्तियां थीं। उसने गौर से उन पंक्तियों की ओर देखा। ये पंक्तियां उसी की लिखी थीं। कभी उसने राबर्ट फ्रास्ट की कविताएं पढ़ी थीं और उनमें से एक कविता की कुछ पंक्तियां उसे बेहद पसन्द आई थीं; उन्हीं पंक्तियों को उसने अपने पैड पर लिख दिया था। और अब खड़ा-खड़ा वह फिर उन्हीं पंक्तियों को गौर से देख रहा था :

दि उड्स आर लवली, डार्क एण्ड डीप,
बट आई हैव प्रॉमिसेज़ टु कीप,
एण्ड माइल्स टु गो, बिफ़ोर आई स्लीप,
एण्ड माइल्स टु गो, बिफोर आई स्लीप।
(घने ये वन सुन्दर भरपूर,
मुझे पर रखनी बात जरूर,
अभी सोने से पहले और,
मुझे चलना है मीलों दूर,
मुझे चलना है मीलों दूर)।

इन पंक्तियों ने जाने कितनी बार उसे आगे बढ़ने की प्रेरणा दी थी—आगे बढ़ने की, निरतर आगे बढ़ने की। और इसीलिए आज ७४ वर्ष की आयु में भी वह कर्मशील है, बिना थके निरंतर आगे बढ़ता जा रहा है।

लेकिन इधर कुछ महीनों से उसकी गतिशीलता में कुछ अवरोध आ गया है। अनेक चिन्ताओं ने, आपसी मतभेद ने, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं ने, मित्रता का दावा करने वालों के मित्रघात ने उसे थका डाला है। उसके चेहरे पर शिकनें डाल दी हैं और उसकी गुलाब-सी निश्छल मुस्कान में वेदना की हल्की कूची फेर दी है। फिर भी वह नीलकण्ठ शिव की तरह समस्त समस्याओं, समस्त दुखों और समस्त वेदनाओं को अपने

में समेटे चला जा रहा है, आगे बढता जा रहा है। लेकिन कब तक ? ईर्ष्या, द्वेष, सम्प्रदाय, कूटनीति, रगभेद, मित्रघात के हजारों सर्पों के डक को वह कब तक सह सकेगा ? कब तक उन्हे हंसते-हंसते झेल सकेगा ?

इसीलिए कल रात जब वह अपना समस्त कार्य निबटाकर उठा और उसकी निगाहें अपने पैड पर लिखी कविता पर टिकी, तो वह मुस्कराया। लेकिन इस मुस्कान मे अकथ वेदना थी, एक गतिशील मनुष्य की थकान थी और थी, विषपायी कण्ठ की ओर बढ़ती हुई गहरी नीली छाया।

वह हल्के-हल्के कदमों से अपने पलग की ओर बढ़ा और शीघ्र ही निद्रा ने उसे अपने अक मे ले लिया।

"लेकिन···मुझे रखनी है बात जरूर···अभी सोने से पहले और, मुझे चलना है मीलों दूर···मीलो दूर।"

जाने कितने वादे थे, जो उसे पूरे करने थे, कितनी समस्याएं थीं, जो उसे हल करनी थी; कितने प्रश्न थे, जिन पर उसे विचार करना था।

भोर हुई और वह उठा। सूर्य की किरणों ने तीन मूर्ति के उस भवन की ओर अपनी बाहें फैलाई ही थी कि तभी एक अजीब-सा दर्द उसने अपनी पीठ पर महसूस किया।

सामने टंगा कैलेण्डर बता रहा था, आज की तारीख— २७ मई, १६६४। दीवाल की घड़ी समय बता रही थी—६ बजकर २० मिनट। और इसी समय उसे दिल का भारी दौरा पडा और वह बेहोश हो गया। चेतना ने शरीर का साथ छोड दिया और वाणी ने *जिह्वा का।*

डाक्टर दौड़े-दौड़े आए। उस महामानव की चेतना वापस लौटाने का, जिह्वा में वाक्-शक्ति लाने का भरसक प्रयत्न करने

लगे। इंजेक्शन दिए गए, ऑक्सीजन दिया गया, सभी सम्भव प्रयत्न किए गए। लेकिन जो अचेत था, अचेत बना रहा।

सूचना पाते ही राष्ट्रपति भागे हुए आए; उपराष्ट्रपति दौड़े, अनेक मन्त्रिगण पहुंचे। तीन मूर्ति भवन में अजीब-सा सन्नाटा छा गया—एक अजीब-सा वातावरण, मानो काल की छाया मंडरा रही हो। चारों ओर सुनसान। केवल वहां उपस्थित लोगों के हाथों की घड़ियों की टिक-टिक सुनाई दे रही थी।

लगता था समय तेजी से बढ़ता जा रहा है।

डाक्टर भरसक प्रयत्न कर रहे थे; सभी की निगाहें उस व्यक्ति पर टिकी थीं, जो बेहोश पड़ा था; कहीं कोई आवाज नहीं; केवल समय तेजी से भाग रहा था—टिक-टिक-टिक···

ग्यारह बजे लोकसभा की बैठक आरम्भ हुई। गृहमंत्री श्री गुलजारीलाल नन्दा ने भारी कण्ठ से सूचना दी, "स्पीकर महोदय, अत्यन्त परितप्त हृदय से मैं सदन को प्रधानमंत्री श्री नेहरू के स्वास्थ्य की हालत से सूचित करना चाहता हूं। प्रातः ६ बजकर २० मिनट से वे सख्त बीमार हैं और उनकी हालत चिन्ताजनक है।"

श्रोताओं के हृदय अज्ञात भय से धड़क उठे। जंगल की आग की तरह यह खबर पूरी राजधानी में फैल गई। जो जिस हालत में था उसी हालत में तीन मूर्ति की ओर चल पड़ा। नेहरू जी की कोठी की ओर मंत्रियों, संसद-सदस्यों, आबाल-वृद्धों, स्त्रियों, सभी का तांता लग गया।

शान्ति का मसीहा आज शान्त मुद्रा में अपने पलंग पर पड़ा था, और दर्जनों निगाहें उस पर टिकी थीं। सब प्रतीक्षा में थे कि वह आंखें खोले।

लेकिन सुबह साढे छ बजे जो उसने आंखे बन्द की थी, वे कभी नहीं खोली। लगभग दो बजे डाक्टरों ने हताश होकर कह दिया—"ज्योति बुझ गई है।"

एक अजीब-सा सन्नाटा छा गया, मानो समय रुक गया हो, दुनिया की सभी चीजें स्थिर हो गई हों। कहीं कोई हलचल नहीं रही।

आकाशवाणी के 'विविध भारती' से गीत चल रहा था—"मत रो माता, लाल तेरे बहुतेरे···।" यकायक गीत बन्द हो गया। श्रोताओं ने चौंककर अपने-अपने रेडियो की ओर देखा। यह गाना क्यों बन्द हुआ? तभी रेडियो से उन्हें भर्राई आवाज में सुनाई दिया—"हमें अत्यन्त खेद के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि भारत के प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू अब इस संसार में नहीं रहे। आज दोपहर दो बजे अचानक उनका स्वर्ग-वास हो गया···।"

विदेशों के रेडियो-स्टेशनों ने भी अपने कार्यक्रम बन्द कर दिए और बड़े दुख से सुनाया कि भारत के प्रधानमंत्री श्री जवाहर-लाल नेहरू अब नहीं रहे।

सारा संसार शोक के सागर में डूब गया। वह व्यक्ति जिसने जाने कितनी बार सारी दुनिया को विश्व-युद्ध के कगार में गिरते-गिरते बचाया था, जिसने समस्त संसार को शान्ति का पाठ पढ़ाया था, जिसने संसार की दो प्रमुख विरोधी शक्तियों में मेल कराया था, वही आज अपनी अनन्त यात्रा पर चल दिया था।

धरती शोक-विह्वल थी। उसने अपना सपूत खो दिया था, अपना कुलदीपक, अपना सूर्य खो दिया था। वास्तव में आकाश

का सूर्य भी उस समय अपने आंसू छिपाने बादलों की ओट हो गया। मई की तपती दोपहरी के वे बादल भी कांप उठे थे; उन्होंने भी शान्ति के उस मसीहे की स्मृति में दो बूंदें ढुलका दी थी।

अब तक जो समय रुक गया था, तेजी से बढ़ने लगा। दुकानें बन्द हो गईं, दफ्तर बन्द हो गए, जो जहा था, वहीं से तीन मूर्ति की ओर चल पड़ा। बाजार सुनसान हो गए, दफ्तरों में सन्नाटा छा गया। हलचल थी तो केवल तीन मूर्ति की ओर जाने वाली सड़कों पर, जहां जनता का सागर उमड़ पड़ा था।

मनहूस वातावरण। आकाश का रंग बदल गया। बादलों में हलचल आ गई। हवा तेज हो गई। देखते-देखते सारा आकाश धूल से भर उठा और तेज आंधी चलने लगी। लोगों ने देखा—मिण्टो रोड के पास दो पेड़ एक के बाद एक धड़ाम से गिर पड़े, मानो अपने प्यारे नेता नेहरू के निधन का दुख न सह पाए हों।

केवल ये पेड़ ही नहीं, अनेक मनुष्य भी यह महान दुख न सह पाए। कई व्यक्तियों की हृदय की गति बन्द हो गई और वे भी अपने प्रिय नेता के साथ ही चल बसे। अनेक व्यक्तियों ने अपना सिर मुड़वा दिया, मानो उनके अपने किसी सगे की मृत्यु हो गई हो।

भारत ही नहीं बल्कि सारा संसार शोक-सागर में डूब गया। देश-देश के नेता अपनी अन्तिम श्रद्धांजलियां भेंट करने विमानों द्वारा दिल्ली की ओर चल पड़े। देश के प्रत्येक शहर से लोग दिल्ली आने लगे। और जो दिल्ली में थे वे तीन मूर्ति की ओर चल पड़े।

आंधी और तूफान में भी तीन मूर्ति के आगे लाखों की भीड़ जमा हो गई—अपने प्रिय नेता के अन्तिम दर्शन करने।

छोटे-छोटे बच्चे प्रधानमंत्री-भवन के फाटक के सींखचे पकड़कर अन्दर झांक रहे थे, उनके नरम-नरम गालों पर आंसुओं की बूंदें ढुलक रही थी, बाल बिखरे थे और वे सिसक-सिसककर कह रहे थे—"चाचा नेहरू अमर हैं !"

हाय ! अब कौन उन्हें इतना प्यार करेगा ?

लम्बी लाइन लग गई, नेहरू जी के दर्शन करने। कोई हाथ में लाल गुलाब लिए था, कोई सफेद जूही, कोई फूलों की माला और कोई गुलदस्ता। फूलों के उस राजकुमार को सब फूलों से ढक देना चाहते थे ; शान्ति के उस दूत पर सब फूलों की कोमल पंखुड़ियां बिखेर देना चाहते थे।

और तभी उनके माली ने देखा, फूलों से ढके उस राजकुमार की अचकन पर तो लाल गुलाब है ही नहीं। शायद जब उन्हें शयनागार से नीचे लाया गया, तभी अचकन से फूल गिर पड़ा। माली दौड़ा-दौड़ा बाहर गया। एक सुन्दर-सी लाल-लाल गुलाब की कली तोड़ी उसने। अन्दर आया और कांपते हाथों से उस गुलाब को अपने राजा नेहरू की अचकन पर टाक दिया—"लो ! फूलों के राजकुमार, अपना गुलाब ! मेरे रहते तुम्हारी अचकन पर लाल गुलाब न हो ! मर जाऊंगा मैं, लेकिन तुम्हें बिना गुलाब के नहीं देख सकूंगा। लो, यह एक और लाल गुलाब, अन्तिम गुलाब !"

कौन ऐसा अभागा होगा, जिसने माली को गुलाब टांकते देख दो आंसू न लुढ़का दिए होंगे, जिसका कण्ठ न भर आया होगा, जिसके होंठों पर कम्पन न आ गई होगी !

रात का एक बज गया। लाखों की भीड़ अब भी खड़ी थी, शान्त, दुखी, पंक्ति बांधे—अपने प्रिय नेता के अन्तिम दर्शन के

लिए। बच्चे रो रहे थे, स्त्रियां सिसक रही थीं, युवकों की आंखें नम थीं, वृद्धों के गालों पर आंसू सूख गए थे और आंखें पथराई-सी उस लम्बी लाइन को पार कर उस भवन पर टिकी थीं, जहां वह प्रिय नेता आज चुपचाप लेटा था।

जो कभी चुप नहीं रहा, जिसने हमेशा गरीबों, पीड़ितों, दुखियों के पक्ष में आवाज बुलन्द की, जो देश की स्वतन्त्रता के लिए सैकड़ों बार मंच पर दहाड़ा, जिसने विश्वशान्ति के लिए सैकड़ों बार बीसियों देशों में नारे लगाए, जिसने दुनिया को युद्ध की आग से बचाने के लिए लाखों मीलों की यात्रा की, जो किसानों के बीच किसान बन गए और मजदूरों के बीच मजदूर, जो राजनीतिज्ञों के बीच गम्भीर विचारक बना और बच्चों के बीच बच्चों की तरह खिलखिलाया—वही आज अपने भवन के आंगन में शान्त लेटा था और आबाल-वृद्ध सभी पंक्तिबद्ध हो उसके अन्तिम दर्शन कर रहे थे। किसी को नींद नहीं, भूख-प्यास नहीं, थकान नहीं। घण्टों से पंक्ति में खड़े। जाने कौन-सा जादू था उस व्यक्ति में, जिसने, जब जीवित रहा तब भी इसी तरह लोगों का मन मोहा और आज मृत है तब भी लोगों को अपनी ओर खींच रहा है।

कितना भाग्यशाली होता है वह युग जो इतने महान व्यक्ति को जन्म देता है! कितना भाग्यशाली होता है वह देश, जिसकी मिट्टी में इतना महान व्यक्ति खेलता है और बड़ा होता है। कितने सौभाग्यशाली होते हैं वे लोग, जो इतने महान व्यक्ति के दर्शन करते हैं।

और आज उसके निधन से धरती रोई, आसमान रोया, सूर्य बादलों की ओट छिप गया, हवा बेतहाशा भागने लगी, जनता की आंखों से गंगा-जमुना बहने लगी।

कल इसी महान आत्मा के पार्थिव शरीर को शान्ति-पाठ

ले जाया जाएगा—अन्तिम संस्कार के लिए । इस भवन में वह पूरे १७ वर्ष रहा और इसी भवन से उसने देश की बागडोर संभाली, सारे संसार को शान्ति का मार्ग दिखाया। कल जब उसके पार्थिव शरीर को इस भवन से हमेशा-हमेशा के लिए ले जाया जाएगा, तब क्या यह भवन रो नहीं उठेगा, धरती डगमगा नहीं जाएगी…?

२
राजगृह से कारागृह तक

गंगा, जमुना और अन्त:सलिला सरस्वती के संगम पर एक खूबसूरत शहर है—प्रयाग। इसी को इलाहाबाद भी कहते हैं। यहां सुप्रसिद्ध वकील पण्डित मोतीलाल नेहरू रहते थे, जिनके ऐश्वर्य को देख कर बड़े-बड़े महाराजा भी दंग रह जाते थे। उन्हीं के घर १४ नवम्बर, १८८९ को जवाहरलाल जी ने जन्म लिया।

इकलौता लड़का, सबकी आंखों का राजदुलारा। घर पर ही अंग्रेज अध्यापक पढ़ाने आता और रात को सोने से पहले मां या मौसी धर्म-पुराण की कहानियां सुनाती। जब वे ११ वर्ष के हुए, तब एक बहन पैदा हुई।

पिता अच्छी-से-अच्छी शिक्षा देना चाहते थे। इसलिए वे पूरा परिवार लेकर इंग्लैंड गए—बालक जवाहरलाल को स्कूल में भरती करने। वहां हैरो स्कूल में भरती कराकर पिता

सपरिवार लौट आए। बालक नेहरू वहां अकेले रह गए, अजनबियों के बीच, घर से हजारों मील दूर—१५ साल की कच्ची उम्र में।

फिर उन्होंने कैम्ब्रिज के ट्रिनिटी कालेज से बी० ए० की डिग्री ली और १९१२ में इनर टेम्पल से बैरिस्टरी की। इसी बीच जर्मनी, फ्रांस, आयरलैण्ड, नार्वे आदि अनेक यूरोपीय देशों की यात्रा की।

सन् १९१२ में भारत लौटे तो यहां की हालत देखकर बहुत दुखी हुए। प्यारा देश, दासता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ। इलाहाबाद हाईकोर्ट में वकालत शुरू की, लेकिन दिल भारत की दुर्दशा के समाधान में अटका रहा।

लोकमान्य तिलक जेल में थे, गरम दल वाले कुचल दिए गए थे, चारों ओर अंग्रेजों का आतंक जमा हुआ था। इसी बीच बांकीपुर में कांग्रेस-अधिवेशन हुआ। युवक जवाहर उसके प्रतिनिधि की हैसियत से गए। उस समय कांग्रेस बड़े आदमियों की संस्था मात्र थी। जवाहरलाल जी को संतोष नहीं हुआ। उनके मन में तो देश-प्रेम का जोश हिलोरें ले रहा था। वे तो भारत को उतना ही स्वतंत्र और समृद्ध देखना चाहते थे, जितना इंग्लैण्ड था। देश का दुःख उन्हें सता रहा था, जनता उन्हें बुला रही थी, "आओ, आओ देश के जवाहर, हमारा उद्धार करो! हमें रास्ता दिखाओ।"

तब पहली बार वे जनता के बीच गए, उनसे बोले। अंग्रेज सरकार ने १९१५ में प्रेस-कानून बनाकर समाचारपत्रों पर कुछ पाबन्दियां लगाईं। युवक जवाहरलाल से सहा न गया। कानून के विरोध में आम सभा हुई। युवक जवाहरलाल बोले, पहली बार, जनता के बीच में। इतना अच्छा बोले कि भाषण के बाद

सर तेज बहादुर सप्रू ने उन्हें उठाकर चूम लिया।

यह उनका पहला भाषण था और यही उन्हें पहला पुरस्कार मिला, प्रेम का।

१९१६ में लखनऊ में कांग्रेस-अधिवेशन हुआ। कर्मवीर गांधी आए थे। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के अधिकारों के लिए जो कार्य किए थे, उनसे भारत के नवयुवक उनकी ओर आकर्षित हो चुके थे। युवकों के मन में उनके प्रति बहुत श्रद्धा पैदा हो गई थी।

यहीं लखनऊ-अधिवेशन में जवाहरलाल जी ने पहले-पहल देखा गांधी को—उस महामानव को जिसने भारत की गुलामी की जंजीरों को तोड़ने का संकल्प लिया था।

पहला विश्वयुद्ध १९१४ में शुरू हो चुका था। भारत इस युद्ध में नहीं था, लेकिन गुलाम देश होने के कारण उसे जबरदस्ती अंग्रेज का साथ देना पड़ रहा था। भारतवासियों को जबरदस्ती युद्ध-कोष में चन्दा देना पड़ता था। करोड़ों रुपए भारत की गरीब जनता ने दिए।

पंजाब आदि इलाकों में जबरन भरती शुरू हो गई थी। युद्ध के लिए कुल ६॥ लाख युवक भरती किए गए, जिनमें से ३० हजार मारे गए, ६० हजार घायल हुए, ७॥ हजार बन्दी बनाए गए और ४ हजार लापता माने गए।

युद्ध की यह विभीषिका किसी भी संवेदनशील व्यक्ति का दिल दहला देने के लिए काफी थी।

गुलाम देश कितना परवश होता है, इसका पहला अनुभव युवक जवाहर को इस विश्वयुद्ध से हुआ।

फिर जलियांवाला बाग का पैशाचिक हत्याकाण्ड।

कर्मवीर गांधी के आह्वान पर देश-भर में ६ अप्रैल १९१९ को सत्याग्रह-दिवस मनाया गया था। सारे देश में हड़ताल रही; तमाम काम-काज बन्द रहे। जनता को गांधी जी एक नई ज्योति दिखा रहे थे। अंग्रेज घबरा उठे। उनके आदेश से दिल्ली, अमृतसर और अहमदाबाद में पुलिस और सेना ने गोलियां चलाईं। पंजाब में 'मार्शल ला' लागू कर दिया गया।

तब १३ अप्रैल १९१९ को जलियांवाला बाग में विराट सभा हुई। लगभग २० हजार स्त्री-पुरुष और बच्चे थे। लाला हंसराज भाषण दे रहे थे।

तभी जनरल डायर अपने सैनिक लेकर आ पहुंचा। उसने बाग के दरवाजे पर सैनिक बिठा दिए और फिर बिना सूचना दिए उपस्थित जनता पर गोलियां बरसानी शुरू कर दी। सैकड़ों मारे गए, हजारों घायल हुए।

काफी दिनों बाद पंजाब से 'मार्शल ला' हटा। तब कांग्रेस ने जांच-कमेटी भेजी जिसमें थे—महात्मा गांधी, पं० मोतीलाल नेहरू, देशबन्धु दास, अब्बास तैयब जी, फ़ज़लुल हक और श्री गन्नानप। युवक जवाहर भी श्री देशबन्धु दास के सहायक के रूप में गए।

युवक जवाहर ने वहां वह बाग देखा, जहां हत्याकाण्ड हुआ था; वे गलियां देखीं जहां लोगों को पेट के बल रेंगाया गया था। और तब उन्हें पहली बार महसूस हुआ कि अंग्रेज किस हद तक नृशंस अत्याचार कर सकते हैं।

फिर एक घटना और घटी। युवक जवाहर का विवाह १९१६ में हो चुका था। १९२० में उनकी पत्नी श्रीमती कमला नेहरू और माता स्वरूपरानी दोनों बीमार पड़ीं। वे दोनों को मई के महीने मसूरी ले गए और सेवाय होटल में ठहरे।

एक दिन अचानक शाम को पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट उनके पास पहुंचा। उसने मॅजिस्ट्रेट का एक पत्र दिया। पत्र में लिखा था कि जवाहरलाल वादा करें कि वे अफगान प्रतिनिधि-मण्डल से कोई सरोकार नहीं रखेंगे।

अजीब बात थी। उसी होटल में अफगानिस्तान के प्रतिनिधि भी टिके थे, लेकिन उनसे जवाहरलाल जी कभी मिले तक न थे, बातें करना तो दूर रहा। फिर यह वादा क्यों? जवाहरलाल जी भड़क उठे। वादा करना उनकी शान के खिलाफ था। उन्होंने साफ इन्कार कर दिया।

तब हुक्म हुआ कि वे २४ घण्टे के अन्दर मसूरी छोड़ दें।

मां और पत्नी बीमार। कौन देखेगा इन्हें? लेकिन सरकार की यह ज्यादती—इसे कौन सहेगा? जवाहरलाल ने मसूरी छोड़ दिया, लेकिन सिर नहीं झुकाया।

और तब युवक जवाहर को पहली बार अंग्रेजी शासन की ज्यादतियों का अनुभव हुआ।

मसूरी से नेहरू जी का निर्वासन किसानों के लिए सौभाग्य लाया। वे किसान-आन्दोलन में भाग लेने लगे। तब नंगे-भूखे, दलित, पीड़ित भारत का मर्मवेधी चित्र पहली बार उनकी आंखों के सामने स्पष्ट हुआ।

नेहरू जी ने स्वयं लिखा है कि—"मैंने उनके दुःख की सैकड़ों कहानियां सुनीं। कैसे लगान का बोझ दिन-दिन बढ़ता जा रहा है, जिसके तले वे कुचले जा रहे हैं। किस तरह खिलाफ कानून लागें लगाई जाती है और जोरो-जुल्म से वसूली की जाती है। जमीन और कच्चे झोपड़ों से किस तरह उनको बेदखल किया जाता है, कैसे उन पर मार पड़ती है, कैसे वे चारों तरफ जमींदारों के एजेण्टों, साहूकारों और पुलिस के गिद्धों से घिरे रहते हैं।

किस तरह वे कड़ी धूप में मशक्कत करते हैं और अन्त में यह देखते हैं कि उनकी सारी पैदावार उनकी नहीं है—दूसरे ही उठा ले जाते हैं और उसका बदला उन्हें मिलता है ठोकरें, गालियां और भूखे पेट से।"

और इस प्रकार युवक नेहरू ने पहली बार एक नया भारत देखा—किसानों का भारत; नंगे-भूखे; दलित, पीड़ित और अत्याचारों से दबे गरीब किसानों का भारत।

१९२० साल के सितम्बर मास में कलकत्ता में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन हुआ। गांधी-युग आरम्भ हो चुका था। विलायती कपड़े चले गए थे। चारों ओर खादी-ही-खादी दिखाई देती थी।

असहयोग-आन्दोलन शुरू हो चुका था। गांधी जी ने असहयोग का कार्यक्रम बताया—"हिन्दू-मुसलमान दोनों कौमें एक साथ कंधे से कंधा भिड़ाकर आन्दोलन को सफल करें। देश का एक भी बच्चा सरकार को शासन चलाने में मदद न दे। सरकारी नौकर नौकरी छोड़ दें। वकील अंग्रेज-पक्षपातपूर्ण अदालतों में वकालत करना छोड़ दें। विद्यार्थी गुलामी सिखाने वाले स्कूल छोड़ दें। प्रत्येक विदेशी वस्तु से बहिष्कार करें। विदेशी वस्त्र छोड़ दें और खादी अपनाएं। गांव के लोग अपने झगड़ों को पंचायतों में निपटाएं।"

तब पहली बार नेहरू जी को लगा कि अब उनका रास्ता निश्चित हो चुका है, उन्हें किस ओर बढ़ना है और क्या करना है।

गांधी जी के इस आदेश पर देश का युवक-दल मातृभूमि को स्वतन्त्र करने के लिए सिर पर कफन बांध असहयोग-आन्दोलन में कूद पड़ा और उनमें सबसे आगे थे—जवाहरलाल नेहरू।

१९२१ में इंग्लैण्ड के युवराज भारत आने वाले थे। कांग्रेस

उनका बहिष्कार करने का निर्णय कर चुकी थी। सबसे पहले बम्बई में युवराज-विरोधी नारे लगे। अंग्रेजों ने जुलूस पर गोलियां बरसा दीं, जिससे ५३ सत्याग्रही मारे गए और ४०० घायल हुए।

तब तो सत्याग्रह की यह आग पूरे देश में फैल गई।

युवक जवाहरलाल अब तक काफी सक्रिय कार्यकर्ता हो चुके थे। वे उत्तर प्रदेश की कांग्रेस कमेटी के मन्त्री भी थे, इसलिए वे कभी एक शहर में जाते और कभी दूसरे शहर—संगठन-कार्य करने। लखनऊ में उन्होंने भी युवराज के स्वागत का बहिष्कार करने के लिए पर्चे बांटे और इलाहाबाद लौट आए।

इलाहाबाद में उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी का कार्यालय हीवेट रोड पर था। वहीं जवाहरलाल अपने काम में व्यस्त थे। तभी एक क्लर्क भागता हुआ उनके पास पहुंचा। उन्होंने प्रश्नसूचक दृष्टि से उसकी ओर देखा।

"पुलिस तलाशी का वारण्ट लेकर आई है। उसने कार्यालय की इमारत को घेर लिया है।" क्लर्क ने हांफते हुए कहा।

जवाहरलाल जी थोड़े-से उत्तेजित हुए, लेकिन तुरन्त ही शान्त होकर बोले, "देखो, जब पुलिस-अफसर दफ्तर के कमरों की तलाशी ले तो तुम उनके साथ-साथ रहो। बाकी कर्मचारी हमेशा की तरह अपना-अपना काम करते रहें। पुलिस की तरफ ध्यान देने की जरूरत नहीं है।"

सब काम पूर्ववत् चलने लगा। जवाहरलाल जी अपने काम पर लग गए। इस बीच उनका एक कार्यकर्ता और मित्र गिरफ्तार कर लिया गया। वह उनसे विदाई लेने पहुंचा।

जवाहरलाल जी चिट्ठी लिख रहे थे। उन्होंने बिना सिर उठाए कहा, "मैं जब तक चिट्ठी पूरी न कर लूं तब तक ठहरिए।"

चिट्ठी समाप्त हुई, तब उन्होंने उसे विदाई दी। फिर सोचा कि, 'देश भर में क्या हो रहा है। कहीं यहां भी तो पुलिस नहीं

अदालत मानता हूं। मैं इस अदालती कार्रवाई को फरजी समझता हूं, जो बिल्कुल दिखावटी है। जो निर्णय पहले ही निश्चित हो चुका है, उसी को यह अदालत कार्यान्वित करती है।"

मैजिस्ट्रेट ने फिर पूछा, "क्या आप ३ दिसम्बर १९२१ को कांग्रेस समिति की बैठक में उपस्थित थे, जो लखनऊ में हुई थी?"

नेहरू जी ने बड़ी उपेक्षा से उत्तर दिया, "मैं इस प्रश्न का या किसी अन्य प्रश्न का उत्तर नहीं देना चाहता।"

दो दिन बाद मैजिस्ट्रेट ने फैसला सुनाया, "मैं पण्डित जवाहरलाल नेहरू को दण्ड-विधि-संशोधन की धारा (१७१) के अन्तर्गत दोषी ठहराता हूं और उन्हें ६ माह की सादा कैद तथा १०० रुपया जुर्माने की सजा देता हूं। जुर्माने की अदायगी न करने की हालत में कैद की अवधि एक महीना और बढ़ जाएगी।"

यह नेहरू जी की पहली जेल-यात्रा थी।

और इस प्रकार जनता का यह प्रेमी, अपनी जनता की मुक्ति के लिए, अपनी जनता को दासता की बेड़ियों से छुडाने के लिए अपने राजगृह से कारागृह पहुंच गया।

३
लाठियों का प्रहार

तीन महीने बाद जवाहरलाल जी अचानक जेल से छोड़ दिए गए। वे फिर स्वतन्त्रता-आन्दोलन में लग गए।

अंग्रेज सरकार देख रही थी—स्वच्छ श्वेत खादी पहने यह लम्बा छरहरा खूबसूरत नौजवान जहां जाता है, जादूगर की तरह जनता को अपने वश में कर लेता है। उसके आवाहन पर भारत का बच्चा-बच्चा परवाने की तरह स्वतन्त्रता की लौ पर अपनी आहुति देने को तैयार हो जाता है। इतने 'खतरनाक' व्यक्ति को बाहर स्वतन्त्रतापूर्वक रहने देना सरकार के हक में अच्छा न होगा।

और तब से जवाहरलाल जी 'जेल के पंछी' हो गए। अंग्रेज सरकार किसी-न-किसी बहाने उन्हें जेल में डाल देती। जब वे जेल से छूटकर आते तो कुछ अजीब दीवानेपन से स्वतन्त्रता की अलख जगाते हुए देश में घूमते। जो जवाहर कभी सौन्दर्य और ऐश्वर्य में राजकुमार से भी बढ़कर थे, वही स्वतन्त्रता के दीवाने बनकर गांव-गांव भटकने लगे। उनका चौड़ा ललाट, स्नेहिल आंखें, सतेज मुख और मधुर वाणी लोगों को बरबस अपनी ओर खींचती ; वे जन-जन के हृदय के सम्राट बन गए—ऐसे सम्राट जिसके सिर पर कांटों का ताज था।

भारत जाग चुका था। जवाहर की वाणी घर-घर पहुंच रही थी। गांधी जी को लोग महात्मा मानने लगे थे। तब अंग्रेज सरकार ने एक नाटक रचा। उसने घोषणा की कि भारत के शासन में सुधार करने के लिए एक कमीशन बनाया जाएगा और उस कमीशन के अध्यक्ष होंगे—सर जान साइमन। कांग्रेस जानती थी कि यह केवल एक नाटक है और अंग्रेज सरकार जनता की आंखों में धूल झोंकना चाहती है। तब उसने 'साइमन कमीशन' का विरोध करने का निर्णय किया।

फिर जिस दिन (३ फरवरी १९२८) 'साइमन कमीशन' के सदस्यों ने विलायत से आकर भारत की भूमि पर पैर रखा, उसी दिन पूरे भारत में हड़ताल हो गई। जगह-जगह जनता

काले झण्डे लेकर 'साइमन गो बैक' (साइमन वापस लौट जाओ) के नारे लगाने लगी। साइमन को बम्बई बन्दरगाह से चोरों की तरह छिपाकर होटल तक पहुंचाया गया।

कुछ समय बाद यह कमीशन लाहौर पहुचा। पजाब-केसरी लाला लाजपत राय के नेतृत्व में हज़ारों की भीड़ काले झण्डे लेकर 'साइमन गो बैक' के नारे लगाती हुई पहुच गई। अंग्रेजों के होश उड़ गए। उन्होंने बिना आगा-पीछा सोचे पुलिस को डण्डे बरसाने का हुक्म दिया।

लाला जी पर तान-तानकर डण्डे बरसाए गए।

पंजाब-केसरी का इतना बड़ा अपमान! पूरे पजाब का खून खौल उठा।

लाला जी बच न सके। चिकित्सकों के बहुत प्रयत्न करने पर भी १७ नवम्बर १९२८ को वे चल बसे। अपने अन्तिम समय दिल से उठती आह को दबाकर उन्होंने कहा था—"मेरे शरीर पर पड़ी हुई एक-एक चोट ब्रिटिश साम्राज्य के कफन की कील साबित होगी।"

यही साइमन कमीशन ३० नवम्बर को लखनऊ पहुचने वाला था। उसके 'स्वागत' के लिए जोर-शोर से तैयारी होने लगी। आजादी के दीवाने जवाहर भी वहां पहुच गए।

पुलिस घबरा गई। उसने आदेश दिया कि जुलूस निकालने से सड़कों पर आना-जाना रुक जाता है, इसलिए जुलूस न निकाले जाएं।

तब नेहरू जी ने निर्णय किया कि १६-१६ व्यक्तियों की टोलियां बनाकर जुलूस निकाला जाए।

साइमन के आने से एक दिन पहले २९ नवम्बर को हजरतगज से जुलूस निकला। सबसे आगे की टोली में नेहरू जी थे, पीछे

की टोली में गोविन्द वल्लभ पन्त ।

पहली टोली अभी दो सौ गज ही चली होगी कि पुलिस के तीन दर्जन घुड़सवार घोड़े दौड़ाते हुए आ गए। टोली के स्वयं-सेवक तितर-बितर हो गए। कोई सड़क के किनारे की ओर भागा, तो कोई दुकान के अन्दर। घुड़सवार उनका पीछा करते रहे और जहां जो मिला वहीं उसे डण्डे मारते रहे।

लेकिन अकेले नेहरू जी ही ऐसे थे, जो सड़क के बीचों-बीच अचल खड़े रहे। एक सवार उनकी ओर डण्डा घुमाता हुआ बढ़ा। वे फिर भी खड़े रहे।

सवार और निकट पहुंचा। नेहरू जी का दिल क्रोध और अपमान से जल उठा। उन्होंने कहा, "लगाओ !"

सवार ने धमाधम डण्डे मारने शुरू कर दिए। सिर चक्कर खा गया, लेकिन फिर भी वे अडिग खड़े रहे।

तब तक प० गोविन्द वल्लभ पन्त की टोली भी आ गई। सवार उन पर भी पिल पड़े।

अब सभी सत्याग्रही वहीं बैठ गए। किसी का सिर फट गया था, किसी के खून निकल रहा था, कोई बेहोश था और किसी का हाथ-पैर टूट गया था। फिर भी आजादी के वे दीवाने वहीं बैठे रहे।

लखनऊ-भर में खबर फैल गई कि नेहरू जी पर लाठी-प्रहार हुआ है। देखते-ही-देखते हजारों की भीड़ जमा हो गई। अजीब दृश्य था वह ! एक ओर घुड़सवार पुलिस, बीच सड़क पर सत्याग्रही और दूसरी ओर हजारों की भीड़।

कहीं बगावत न हो जाए—पुलिस को डर लगा। उसने रास्ता छोड़ दिया और तब सत्याग्रहियों का जुलूस आगे बढ़ गया।

पिता मोतीलाल जी उस दिन इलाहाबाद थे। खबर पाते ही

रात को ही अपने हाथों मोटर चलाकर लखनऊ के लिए रवाना हो गए। इकलौता बेटा, भारत की भावी आशा—न जाने जालिमों ने कितना मारा होगा !

सुबह ६ बजे जब वे लखनऊ पहुंचे तो बेटा जवाहरलाल जुलूस लेकर स्टेशन जाने की तैयारी कर रहा था। आज ही तो 'साइमन कमीशन' को आना था।

कल जो लाठी-प्रहार हुआ था, उससे सारा लखनऊ भड़क उठा था। स्टेशन पर हजारों की भीड़ जमा हो गई थी। सबके हाथ में काले झण्डे थे और बार-बार नारा लग रहा था—'साइमन गो बैक'। स्टेशन के सामने का सारा मैदान भरा पड़ा था। इनमें बहुत-से सत्याग्रही थे और बहुत-से केवल दर्शक। स्टेशन पर गाड़ी आने वाली थी।

इसी समय पुलिस और सेना के दर्जनों घुड़सवारों ने घोडे दौड़ाते हुए पूरे मैदान को घेर लिया और फिर भीड़ के अन्दर अपने घोड़े दौड़ाने लगे।

यह भी अजीब दृश्य था। हजारों की भीड़ और उन पर घुड़सवार घोड़े दौड़ाते हुए। जाने कितने मारे गए, कितने कुचले गए।

जनता में भगदड मच गई। लेकिन सत्याग्रही अचल खडे रहे। घुड़सवारों ने उन्हें घेर लिया। धड़ाधड़ लाठियां पड़ने लगीं। सत्याग्रही फिर भी अचल खड़े रहे। बड़ी भयंकर मार थी और उससे भी भयंकर निश्चय था इन सत्याग्रहियों का। नेहरू जी पर वह मार पड़ी कि पीठ की खाल उधड़ गई, परन्तु मजाल है कि वे टस से मस हुए हों। पन्त जी की गर्दन टूट गई, लेकिन वे भी अचल खड़े रहे।

नेहरू जी बेहोश होने लगे, तो स्वयंसेवकों ने उन्हें उठा लिया और एक ओर ले गए।

इसी बीच, जिस साइमन के लिए यह सत्याग्रह हुआ था,

की टोली में गोविन्द वल्लभ पन्त।

पहली टोली अभी दो सौ गज ही चली होगी कि पुलिस के तीन दर्जन घुड़सवार घोड़े दौड़ाते हुए आ गए। टोली के स्वयं-सेवक तितर-बितर हो गए। कोई सड़क के किनारे की ओर भागा, तो कोई दुकान के अन्दर। घुड़सवार उनका पीछा करते रहे और जहां जो मिला वहीं उसे डण्डे मारते रहे।

लेकिन अकेले नेहरू जी ही ऐसे थे, जो सड़क के बीचों-बीच अचल खड़े रहे। एक सवार उनकी ओर डण्डा घुमाता हुआ बढ़ा। वे फिर भी खड़े रहे।

सवार और निकट पहुंचा। नेहरू जी का दिल क्रोध और अपमान से जल उठा। उन्होंने कहा, "लगाओ !"

सवार ने धमाधम डण्डे मारने शुरू कर दिए। सिर चक्कर खा गया, लेकिन फिर भी वे अटिग खड़े रहे।

तब तक प० गोविन्द वल्लभ पन्त की टोली भी आ गई। सवार उन पर भी पिल पड़े।

अब सभी सत्याग्रही वहीं बैठ गए। किसी का सिर फट गया था, किसी के खून निकल रहा था, कोई बेहोश था और किसी का हाथ-पैर टूट गया था। फिर भी आजादी के वे दीवाने वहीं बैठे रहे।

लखनऊ-भर में खबर फैल गई कि नेहरू जी पर लाठी-प्रहार हुआ है। देखते-ही-देखते हजारों की भीड़ जमा हो गई। अजीब दृश्य था वह ! एक ओर घुड़सवार पुलिस, बीच सड़क पर सत्याग्रही और दूसरी ओर हजारों की भीड़।

कहीं बगावत न हो जाए—पुलिस को डर लगा। उसने रास्ता छोड़ दिया और तब सत्याग्रहियों का जुलूस आगे बढ़ गया।

रात को ही अपने हाथों मोटर चलाकर लखनऊ के लिए रवाना हो गए। इकलौता बेटा, भारत की भावी आशा—न जाने जालिमों ने कितना मारा होगा !

सुबह ६ बजे जब वे लखनऊ पहुंचे तो बेटा जवाहरलाल जुलूस लेकर स्टेशन जाने की तैयारी कर रहा था। आज ही तो 'साइमन कमीशन' को आना था।

कल जो लाठी-प्रहार हुआ था, उससे सारा लखनऊ भड़क उठा था। स्टेशन पर हजारों की भीड़ जमा हो गई थी। सबके हाथ में काले झण्डे थे और बार-बार नारा लग रहा था—'साइमन गो बैक'। स्टेशन के सामने का सारा मैदान भरा पड़ा था। इनमें बहुत-से सत्याग्रही थे और बहुत-से केवल दर्शक। स्टेशन पर गाड़ी आने वाली थी।

इसी समय पुलिस और सेना के दर्जनों घुड़सवारों ने घोड़े दौड़ाते हुए पूरे मैदान को घेर लिया और फिर भीड़ के अन्दर अपने घोड़े दौड़ाने लगे।

यह भी अजीब दृश्य था। हजारों की भीड़ और उन पर घुड़सवार घोड़े दौड़ाते हुए। जाने कितने मारे गए, कितने कुचले गए।

जनता में भगदड़ मच गई। लेकिन सत्याग्रही अचल खड़े रहे। घुड़सवारों ने उन्हें घेर लिया। धड़ाधड़ लाठियां पड़ने लगीं। सत्याग्रही फिर भी अचल खड़े रहे। बड़ी भयंकर मार थी और उससे भी भयंकर निश्चय था इन सत्याग्रहियों का। नेहरू जी पर वह मार पड़ी कि पीठ की खाल उधड़ गई, परन्तु मजाल है कि वे टस से मस हुए हों। पन्त जी की गर्दन टूट गई, लेकिन वे भी अचल खड़े रहे।

नेहरू जी बेहोश होने लगे, तो स्वयंसेवकों ने उन्हें उठा लिया और एक ओर ले गए।

इसी बीच, जिस साइमन के लिए यह सत्याग्रह हुआ था,

कुछ लोगों को गांधी जी के प्रस्ताव पर आश्चर्य हुआ।

लेकिन गांधी जी ने स्पष्ट शब्दों में कह दिया—"बहादुरी में कोई उनसे (जवाहरलाल जी से) बढ़ नहीं सकता और देश-प्रेम में उनके आगे कौन जा सकता है? कुछ लोग कहते हैं कि वह जल्दबाज और अधीर हैं। यह तो इस समय एक गुण है। फिर जहां उनमें एक वीर योद्धा की तेजी और अधीरता है, वहा एक राजनीतिज्ञ का विवेक भी है।"

कितना सही-सही पहचाना था बापू ने! यही नही, बापू ने *तो यह भी घोषणा कर दी थी कि—"वह (जवाहरलाल जी)* स्फटिक मणि की भांति पवित्र हैं। उनकी सत्यशीलता सन्देह से परे है। वह अहिंसक और अनिन्दनीय योद्धा हैं। राष्ट्र उनके हाथ मे सुरक्षित है!"

अतः १६२६ में जवाहरलाल जी कांग्रेस के सभापति चुन लिए गए।

ठीक एक साल पहले सितम्बर १६२८ में इसी कांग्रेस के सभापति पण्डित मोतीलाल नेहरू थे और कलकत्ता-अधिवेशन में १६ घोड़ों की गाड़ी में पण्डित जी का शानदार जुलूस निकाला गया था। अब एक साल बाद २४ दिसम्बर १६२६ को उनके ही पुत्र श्री जवाहरलाल नेहरू इस कांग्रेस के सभापति बने और लाहौर मे रावी नदी के तट पर उनका शानदार जुलूस निकाला गया। पुत्र सफेद दूधिया रंग के घोड़े पर सवार था। दोनों ओर स्वयंसेवक और उनके पीछे हाथियों के झूल। लाखों की संख्या में नर-नारी 'महात्मा गांधी की जय', 'जवाहरलाल की जय' के नारे लगा रहे थे। माता स्वरूपरानी और पिता मोतीलाल जी एक ओर खड़े पुत्र के इस राष्ट्रीय सम्मान को प्रेम से भीगे नयनों से देख रहे थे। सड़क पर, खिड़कियों में, छतों पर,

छज्जों पर नरमुण्ड-ही-नरमुण्ड दिखाई दे रहे थे। नारों से सारा आकाश गूंज रहा था।

पुत्र और निकट पहुंचा तो हर्षातिरेक से माता स्वरूपरानी के गालों पर मोती की लड़ियां बिखर गईं। उन्होंने दोनों हाथों से अंजुली भरकर रुपयों की बौछार कर दी। पिता मोतीलाल ने फूल बरसा दिए।

कितने सौभाग्यशाली थे वे पिता और माता, जो अपने पुत्र को देश के भाग्यविधाता के रूप में देख रहे थे, और कितनी सौभाग्यशाली थी वह जनता, जिसने अपनी आंखों से वह अनुपम मनोहारी दृश्य देखा था।

पिता मोतीलाल जी ने सगर्व कहा था—"जो काम पिता पूर्ण न कर सका, उसे पुत्र पूरा करेगा।"

फिर सभा-भवन में पुत्र को अध्यक्ष-पद सौंपते हुए पिता ने करतल-ध्वनि की गूंज के बीच ममतामयी मीठी मुस्कान के साथ कहा—"मैं नए अध्यक्ष महोदय को विश्वास दिलाता हूं कि मैं अत्यन्त नियमशील रूप से उनके आदेशों का पालन करूंगा।"

धन्य है वह पिता, जो इतना भाग्यवान था और साथ ही इतना अनुशासनबद्ध भी।

२६ दिसम्बर को महा-अधिवेशन में जन-सागर उमर पड़ा। व्यक्तियों की संख्या ३ लाख से कम न थी। जवाहरलाल जी ने राष्ट्रीय तिरंगा झण्डा फहराया तो गगनभेदी नारे गूंजने लगे—'जवाहरलाल की जय', 'महात्मा गांधी की जय', 'वन्दे मातरम्'।

जवाहरलाल मंच पर पहुंचे तो सर्वत्र सन्नाटा। उन्होंने अपने ओजपूर्ण स्वर में कहा—"मैंने अभी-अभी भारत का राष्ट्रीय झण्डा फहराया है। यह भारत की स्वतंत्रता का चिह्न है और भारत की एकता की निशानी है" याद रखिए जब एक बार यह झण्डा फहराया जा चुका है, तो यह तब तक न गिरने पाए,

जब तक देश का एक भी मनुष्य जीवित है—।"

फिर ३१ दिसम्बर १९२९ को रात के १२ बजकर १ मिनट पर कांग्रेस-अधिवेशन में 'पूर्ण स्वराज' का प्रस्ताव पास हो गया।

पूरा पण्डाल गगनभेदी जय-जयकारों और करतल-ध्वनि से गूंज उठा।

युवक पुत्र सभापति के पद पर गम्भीर 'वृद्ध' की तरह बैठा सब देखता रहा और वृद्ध पिता अपने पुत्र की विजय पर 'युवक' की तरह पण्डाल में ही नाच उठा।

और इस प्रकार कांग्रेस-सभापति का पद ग्रहण करते ही भारत के जवाहर ने देश-भर में एक नई क्रान्ति का सूत्रपात कर दिया। जिस काम को पिता ने शुरू किया था, उसे पुत्र आगे बढ़ाने लगा।

४

जेल का पंछी : वियोग के आघात

१७ अक्तूबर १९३०। मसूरी में मोतीलाल जी काफी समय से बीमार।

जवाहर जी का तूफानी जीवन। एक दिन की भी फुरसत नहीं। अभी ११ अक्तूबर को जेल से छूटे थे। फिर पिता को देखने तुरन्त मसूरी रवाना हो गए। साथ में धर्मपत्नी कमला। तीन दिन पिता के पास रहकर फिर इलाहाबाद रवाना, क्योंकि १९ अक्तूबर को इलाहाबाद में किसान-सम्मेलन में जाना था।

देहरादून में श्री महावीर त्यागी ने सुना कि जवाहरलाल जी मसूरी से लौट रहे हैं तो उन्होंने एक जलसा रख दिया। जलसा रखना था कि कलक्टर ने दफा १४४ लगा दी। अब त्यागी जी घबराए। जवाहरलाल जी अभी जेल से बाहर आए थे, बहुत-से काम बाकी थे। इलाहाबाद में किसान-सम्मेलन में जाना आवश्यक था। अब क्या किया जाए? जवाहरलाल जी तो अब तक मसूरी से चल भी चुके होंगे।

त्यागी जी ने तुरन्त साइकिल उठाई और मसूरी जाने वाली सड़क पर अन्धाधुन्ध भागे। काफी दूर उन्हें मोटर आती दिखाई दी। त्यागी जी ने उसे रोका।

"देहरादून में दफा १४४ का नोटिस जारी हो गया है।" त्यागी जी ने हांफते-हांफते बताया।

"तुमने गजब कर दिया। मेरा सारा प्रोग्राम खराब हो गया।" जवाहरलालजी ने माथे पर हाथ मारकर कहा और फिर कमलाजी की ओर मुड़कर बोले, "बस कमला, तुम पापा की देखभाल करना, मैं तो चला। आई एम इन।"

त्यागी जी कुसूरवार की तरह खड़े थे, बोले "एक तरकीब हो सकती है।"

"अब क्या खाक तरकीब हो सकती है!" जवाहरलाल ने मुसकाकर कहा, "आपकी हिमाकत का नतीजा है यह।"

लेकिन त्यागी जी ने सचमुच अच्छी तरकीब बता दी। बात यह थी कि जवाहरलाल जी के लिए एक सज्जन के यहां चाय का प्रबन्ध था। वहां से चाय पीने के बाद ही उन्हें जलसे में जाना था। त्यागी जी ने सुझाया कि पहले ही जलसे में चला जाए और दो शब्द कहकर जलसा खत्म करके देहरादून से चल दिया जाए।

जवाहरलाल जी को बात जंच गई, "यह ठीक है, जल्दी

मोटर में बैठो !"

तीनों जलसे में पहुंचे। हजारों की भीड़। प्यारे जवाहरलाल को कौन नहीं देखना चाहता ? उसकी ओजमयी मधुर वाणी कौन नहीं सुनना चाहता ? और जवाहरलाल ? जनता का प्रेमी, बोलना शुरू किया तो बोलते चले गए। यहां तक कि पुलिस भी पहुंच गई। त्यागी जी ने जवाहरलाल जी का अनेक बार कुरता झटका, पर जनता का यह प्रेमी, स्वतन्त्रता का यह दीवाना, बोलता रहा।

बड़ी मुश्किल से भाषण बन्द कराया, तो दफा १४४ का नोटिस उनके सामने कर दिया गया। जवाहरलाल जी ने नोटिस के पीछे लिख दिया—"भाषण के बाद मिला। मुझे अफसोस है कि मैं इसे भंग करने से वंचित रह गया।" और फिर कमला जी के साथ सीधे इलाहाबाद रवाना हो गए।

उनके जाने के बाद त्यागी जी ने मोतीलाल जी को फोन पर सब बातें बताईं तो तुरन्त पूछ बैठे, "स्टेशन पर कितनी भीड़ थी ? और भीड़ में कमला को धक्का-उक्का तो नहीं लगा ?" धन्य है यह पुत्र और पुत्रवधू जिन्हें बाप का इतना प्यार मिला और धन्य है वह पिता जो इतना प्यार बरसा सकता है ! यही नहीं, बल्कि मोतीलाल जी बीमार होते हुए भी दूसरे दिन इलाहाबाद के लिए रवाना हो गए।

लखनऊ में फिर एक और जलसा। दफा १४४ लागू और जवाहरलाल जी का सार्वजनिक भाषण। वहां भी अथाह भीड़ के कारण पुलिस उन्हें न पकड़ सकी।

१८ अक्तूबर की रात जवाहरलाल जी इलाहाबाद पहुंचे और १९ की रात मोतीलाल जी पहुंचने वाले थे। सुबह ही दफा १४४ का नोटिस जारी कर दिया गया था। लेकिन किसान-

सम्मेलन में जाना जरूरी था।

सम्मेलन मे शाम हो गई। वहां से कमला जी के साथ सीधे स्टेशन पर पहुंचे, पिता को लेने।

गाड़ी लेट थी और उधर फिर एक और सभा में जाना था। बहुत प्रतीक्षा के बाद गाड़ी पहुंची। पिता जी उतरे, माता जी उतरी, नन्ही पुत्री इन्दिरा और अन्य लोग उतरे।

जवाहरलाल जी उनसे मिले और फिर उन्हें वहीं छोड़कर कमला जी के साथ चल दिए, एक और सभा मे।

रात के ८ बज गए। सभा समाप्त हुई। थकी-मादी कमला जी को लेकर जवाहरलाल जी कार मे बैठे और कार चल दी सीधे 'आनन्द भवन' की ओर।

शाम को पिता जी सपरिवार मसूरी से आए थे। दो बात भी न हो पाई थीं। बहुत-सी बातें करनी है, पिता जी के साथ। पुत्री इन्दिरा और तीन नन्ही-मुन्नी भानजियो के साथ अभी खेलना है, हंसना है, हंसाना है। पिताजी भी तो उतावले होंगे, मिलने के लिए। ड्राइवर कार तेज क्यों नही चलाता ?

हां, वह सामने 'आनन्द भवन' दिखाई तो दे रहा है। बस दो मिनट की बात है। ड्राइवर पर झुंझलाने से क्या फायदा! अब दो ही मिनट की बात है'''हैं, यह क्या ?

कार झटके से रुक गई। सामने नायब कोतवाल वारण्ट लेकर खड़ा कह रहा है—"मैं आपको गिरफ्तार करने आया हूं।"

जवाहरलाल जी नीचे उतर गए और कार अकेली कमला जी को लेकर 'आनन्द भवन' की ओर चल दी।

और 'जेल का पंछी' केवल ८ दिन बाहर रहकर पांचवी बार फिर जेल पहुंच गया।

—

नोगा, बेचारी कमला को!

लेकिन नहीं, सदमा नहीं लगा कमला जी को। स्वतन्त्रता के वीर योद्धा की पत्नी, चाहे कितनी कमजोर हो, बीमार हो, योग्यता में पीछे नहीं रह सकती। भारत की यही परम्परा है। पति जिस ध्येय को लेकर बढ़ रहे हैं और जेल गए हैं, उसे आगे बढ़ाना ही होगा, चाहे लाख तूफान आएं या लाख रुकावटें आएं। बढ़ना है, और आगे बढ़ना है—बस, यही भारतीय नारी की परम्परा रही है।

जवाहरलाल जी जेल गए तो कमला जी ने असहयोग-आन्दोलन का नेतृत्व हाथ में ले लिया। जुलूसों में राष्ट्रीय झंडा लेकर आगे-आगे चलने लगीं, विदेशी वस्त्रों की होली जलाने लगीं, धरना देने लगीं; न खाने-पीने की परवाह और न अपनी बीमारी की परवाह। और तब जो होना था वही हुआ। १९३१ का पहला दिन शुरू ही हुआ था कि वे गिरफ्तार कर ली गईं।

शान के साथ, राजकुमारी की तरह जब वे जेल की ओर बढ़ीं तो एक पत्रकार ने उनसे संदेश मांगा। उन्होंने मुस्कराते हुए संदेश दिया—"आज मुझे असीम प्रसन्नता है और इस बात का गर्व है कि मैं अपने पति के पदचिह्नों पर चल सकी हूं। मुझे आशा है कि आप लोग ऊंचे झण्डे को नीचे न झुकने देंगे।"

धन्य है यह भारतीय नारी! जवाहरलाल जी ने जब सुना होगा तो गर्व से उनका सीना कितना फूल गया होगा, होंठों पर कितनी प्यारी मुस्कान और चेहरे पर आत्मसंतोष की कैसी झलक आ गई होगी!

वृद्ध पिता मोतीलाल जी ने सुना तो कलकत्ते से भागे-भागे इलाहाबाद पहुंचे। ७० वर्ष के वृद्ध अनेक बार जेल जाने और गुलामी के अनेक आघात सहने से वृद्ध सिंह की तरह जर्जरित हो गए थे। आते ही बीमार पड़ गए।

२६ जनवरी को जवाहरलाल जी छोड़ दिए गए और कमला

जी भी। उसी दिन गांधी जी भी यरवदा जेल से छोड़े गए। मोतीलाल जी का बहुत उपचार किया गया, ४ फरवरी को उन्हें एक्सरे कराने लखनऊ ले गए, लेकिन होनी टल न सकी। ६ फरवरी १९३१ को वे चल बसे।

उन्हें तिरंगे कफन में लपेटकर इलाहाबाद लाया गया। लाखों की भीड, हरेक की आंखों मे आंसू। महात्मा गांधी ने रोते-रोते कहा—"मोतीलाल जी के चले जाने से मैं एक विधवा की भांति पीड़ा अनुभव कर रहा हूं।"

और जवाहरलाल जी? क्या कहते वे! दुःख जब चरम सीमा पर होता है तब वाणी मूक हो जाती है।

फिर ८ अप्रैल १९३२ का वह कलंकित दिन। जवाहरलाल जी छठी बार जेल की सजा भुगत रहे थे। उनके परिवार के प्रमुख व्यक्ति—श्री रणजीत पण्डित, श्रीमती कृष्णा नेहरू—सभी जेल पहुंच चुके थे। कमला जो बीमारी के कारण जेल न जा सकी थी और बाहर छटपटा रही थी। माता स्वरूपरानी कातर नयनों से अपने बच्चों को एक-एक करके जेल जाते देख चुकी थी।

जब उनसे नहीं रहा गया तो वे भी राष्ट्रीय सप्ताह में भाग लेने लगी। यह सप्ताह ६ से १३ अप्रैल १९३२ को मनाया जा रहा था। ८ अप्रैल को इलाहाबाद मे शानदार जुलूस निकला, जिसके आगे-आगे थी—माता स्वरूपरानी।

और तभी पुलिस ने अपनी काली करतूत दिखाई। जुलूस के लोगों को तडातड लाठियों से मारना शुरू कर दिया।

पूरा जुलूस रुक गया। वृद्धा माता थक गई थी। कोई-एक कुर्सी ले आया और जुलूस में सबसे आगे रखकर उसने उस पर वृद्धा माता स्वरूपरानी को बिठा दिया।

पुलिस से यह नहीं देखा गया ; उसने एक-एक करके सबको खदेड़ना शुरू कर दिया और अपने पापी हाथों से वृद्धा माता को कुर्सी से नीचे गिरा दिया तथा उन पर तड़ातड़ डण्डे बरसा दिए।

वृद्धा माता का सिर फट गया। खून की धार बह निकली और वे बेहोश हो गईं।

पुत्र जवाहरलाल ने बरेली जेल में यह खबर सुनी। क्या बीती होगी उन पर ? वृद्धा मां, और पुलिस के क्रूर डण्डे। यदि वे वहां होते और यह कलंकित दृश्य देखते, तो···? तो शायद पिछले १२ वर्षों से उन्होंने अहिंसा का जो पाठ पढ़ा था और इसी कारण स्वयं डण्डे खाते समय अन्त तक शान्त रहे, उसे वे भूल गए होते। कौन जाने ?

नेहरू जी जेल से छूट चुके थे। जनवरी १९३४ में वे कलकत्ता गए। वहां कांग्रेस-अधिवेशन होने वाला था। पुलिस ने धरपकड़ शुरू कर दी। वातावरण क्षोभपूर्ण था। अनेक सभाएं हुईं, जिनमें नेहरू जी ने साम्राज्यवाद की बुराइयां बताईं और वर्तमान सरकार के प्रति क्षोभ प्रकट किया।

इस बीच बिहार में भीषण भूकम्प आया था। नेहरू जी का मोम-सा हृदय पिघल गया। वे तुरन्त बिहार चल दिए।

बिहार के बाद ११ फरवरी को वे इलाहाबाद पहुंचे। उन्हें मालूम था कि वे अधिक समय तक बाहर नहीं रह सकते।

दूसरे दिन शाम को वे कमला जी के साथ बरामदे में बैठे चाय पी रहे थे। उसी समय राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन भी पहुंचे। वे सब बरामदे में खड़े ही थे कि 'आनन्द भवन' के फाटक के अन्दर पुलिस की गाड़ी आती दिखाई दी।

पुलिस-अफसर गाड़ी से उतरा ही था कि नेहरू जी ने आगे बढ़कर मुस्कराते हुए कहा, "आइए, बहुत दिनों से आपका

इन्तजार था।"

बेचारा अफसर खिसिया गया, झेंपते हुए बोला, "कुसूर मेरा नही है, यह वारण्ट कलकत्ते से आया है।"

और इस तरह जेल का पछी फिर आठवी बार जेल जाने को तैयार हो गया।

कमला जी कपड़े लाने के लिए अन्दर चल दी। नेहरू जी भी पीछे-पीछे गए। अन्दर पहुंचते ही कमला जी अचानक मुड़ी और नेहरू जी की गर्दन में अपनी बाहे डालकर बेहोश हो गई।

क्यों ? ऐसा तो पहले कभी नही हुआ था। वीरागना की तरह उन्होंने सदैव नेहरू जी को आखों में आंसू और मुह पर मुस्कान लाकर विदाई दी थी। फिर इस बार ऐसा क्यों हुआ ?

नेहरू जी देहरादून जेल भेज दिए गए। कमला जी सख्त बीमार पड़ गई। ११ अगस्त १९३४ को नेहरू जी देहरादून से इलाहाबाद लाए गए और दूसरे दिन शाम को ११ दिन के लिए रिहा कर दिए गए—बीमार पत्नी को देखने।

घर आकर देखा तो पत्नी हड्डियों का ढेर-मात्र रह गई थी। आह ! विवाह हुए पूरे अठारह वर्ष हो गए थे, लेकिन क्या कभी दिल खोलकर मिल पाए ? पति सार्वजनिक कार्यों में फसता चला गया और पत्नी बीमारी मे। एक ओर जेल-यात्रा का दौर-दौरा और दूसरी ओर बीमारियों का।

ये अठारह वर्ष कैसे बीते ? नेहरू जी ने लिखा—'वैवाहिक जीवन के अठारह बरस ! लेकिन इनमे से कितने साल मैंने जेल की कोठरियो में और कमला ने अस्पतालों तथा सैनिटोरियमों मे बिताए ? और फिर इस समय भी मैं जेल की सजा भुगतता हुआ कुछ ही दिनों के लिए बाहर आ गया था और वह बीमार पड़ी हुई जीवन के लिए संघर्ष कर रही थी।'

ग्यारह दिन बाद नेहरू जी फिर जेल चले गए और उधर

कमला जी की हालत खराब होती चली गई। नेहरू जी अपना समय काटने के लिए अपनी आत्मकथा लिखने लगे।

कमला जी को भुवाली पहुंचाया गया और फिर यूरोप। नेहरू जी ४ सितम्बर १९३५ को जेल से एकाएक छोड़ दिए गए। कमला जी की हालत अत्यन्त चिन्ताजनक हो गई थी। नेहरू जी हवाई जहाज से तुरन्त यूरोप रवाना हुए।

यूरोप से उन्होंने डा० महमूद को लिखा—'मेरा अधिकांश समय सेनिटोरियम में कमला के साथ बीतता है और फिर मैं काफी रात तक अन्य काम करता हूं। जेल में मैंने जो पुस्तक (मेरी कहानी) लिखी उसे दुहराने में मेरा बहुत समय लग जाता है। और फिर यूरोप तथा भारत के बहुत-से दोस्त मुझे पत्र लिखते हैं, उन्हें उत्तर भेजना बहुत कठिन हो जाता है...।'

इस बीच नेहरू जी को सूचना मिली कि वे फिर कांग्रेस के सभापति चुने गए हैं। वे उस समय लोजान (स्विट्जरलैंड) में थे। कमला जी अच्छी हो रही हैं—ऐसा उन्हें लगा। अतः उन्होंने २८ फरवरी १९३६ को वहां से लौटने का निश्चय किया।

लेकिन फिर यकायक कमला जी की हालत बहुत खराब हो गई और २८ फरवरी को सुबह वे इस असार संसार से चल दीं। वह सुन्दर शरीर और वह प्यारा-सा मुंह, जो बराबर मुस्कराता था और इतना प्यारा था, राख में बदल गया।

तब हाथ में अपनी प्रिय पत्नी की अस्थियों की मंजूषा और सीने में टूटा दिल लेकर नेहरू जी स्विट्जरलैण्ड से रवाना हुए।

अपनी पुस्तक 'मेरी कहानी' को वे लन्दन में एक प्रकाशक को दे आए थे। भारत लौटते समय जब वे बगदाद रुके तो उनके मन में एक विचार आया। उन्होंने अपने प्रकाशक को केबुल (समुद्री तार) भेजा कि उस पुस्तक में यह समर्पण लिख दे—'कमला को, जिसकी अब याद ही रह गई।'

५

स्वतन्त्रता के द्वार पर

अजीब जिन्दगी थी वह भी। एक ओर पारिवारिक दुख—पिता की मृत्यु, माता पर लाठी का प्रहार, बहनें और बहनोई जेल में, पत्नी की मृत्यु; और दूसरी ओर पूरे देश की बागडोर हाथ में। जिन्दगी को कहीं चैन नहीं, आराम नहीं, चारों ओर काम, काम, बस काम।

उधर दूसरा विश्वयुद्ध शुरू हो गया। १ सितम्बर १९३९ को जर्मनी ने पोलैण्ड पर हमला कर दिया। सारा संसार युद्ध की लपटों में झुलसने लगा। जर्मनी और इटली ने पूरे यूरोप को नष्ट कर डाला। इंगलैण्ड पर बमों की वर्षा की।

नेहरू जी सब देखते रहे, सुनते रहे, फिर भारत को भी इस युद्ध में घसीट लिया गया। हजारों युवक भरती करके युद्ध में झोंक दिए गए। गेहूं महंगा हो गया, चावल महंगा हो गया, गरीब भूखों मरने लगे। नेहरू जी की आत्मा तिलमिला उठी। भारत को स्वतन्त्र होना ही चाहिए। इस तरह दूसरे लोग जबरदस्ती उसे युद्ध में क्यों धकेलें? क्या हक है किसी का कि वह एक देश के जवानों को जबरदस्ती विदेशों में होने वाले युद्ध में भेज दे?

और तब आया अगस्त १९४२। भारत की स्वतन्त्रता के इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण महीना।

८ अगस्त को बम्बई में ग्वालिया टैंक के मैदान में 'अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी' का युगान्तरकारी अधिवेशन हुआ। रात के दस बज चुके थे। महात्मा गांधी का १४० मिनट का ऐति-

हासिक भाषण चल रहा था :

"....मैं आजादी तुरन्त चाहता हूं, आज ही रात को, भोर होने से पहले। आप सबको यह समझ लेना चाहिए कि आप इसी क्षण से स्वतन्त्र स्त्री-पुरुष हैं; तथा यह अनुभव करना चाहिए कि आप स्वतन्त्र हैं, और अब इस साम्राज्यवाद की एड़ी के नीचे दबे हुए नहीं हैं। जो मैं बता रहा हूं, यह कोई बनावटी विश्वास की बात नहीं है। यह स्वतन्त्रता का वास्तविक सत्य है।"

सब शान्त होकर उत्सुकता से सुन रहे थे और गाधी जी कहते जा रहे थे—"जब गुलाम अपने को स्वतन्त्र प्राणी समझने लगता है, तभी उसका बन्धन टूट जाता है। यह मैं एक छोटा-सा मंत्र आपको दे रहा हूं आप इसे अपने हृदय पर अंकित कर लीजिए, जिससे कि आपके प्रत्येक श्वास से यह ध्वनित होता रहे। मन्त्र यह है : 'हम करेंगे या मरेंगे।' या तो भारत को आजाद करेंगे या इस कोशिश में मर जाएंगे। यह देखने के लिए कि हमारी पराधीनता शाश्वत हो गई है, हम जीवित नहीं रहेंगे।"

अंग्रेजों में घबराहट फैल गई। वे जानते थे कि इस बार गांधी की यह आंधी उन्हें भारत से बाहर उडाकर ही चैन लेगी। अतः रातों-रात उन्होंने योजना बनाई और ९ अगस्त की सुबह को अभी सूरज की पहली किरण भी नहीं फूटी थी कि सभी बड़े-बड़े नेता गिरफ्तार कर लिए गए।

महात्मा गांधी बिड़ला हाउस में थे। रात को ही पुलिस ने बिड़ला हाउस घेर लिया और सुबह के ३ बजते ही वे दीवालें फांदकर अन्दर घुस गए। गांधी जी नाश्ता कर चुके थे। पुलिस के पहुंचते ही उन्होंने अपने साथियों से 'वैष्णव जन तो तैने कहिए, जे पीर पराई जाने रे' भजन गवाया और फिर पुलिस के साथ चल दिए।

नेहरू जी अपनी बहन कृष्णा हठीसिंह के यहां ठहरे हुए थे सुबह पांच बजे पुलिस उन्हें भी बन्दी बनाकर ले गई। इसके बाद श्री गोविन्दवल्लभ पन्त, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन सरदार पटेल, राजेन्द्रप्रसाद, मौलाना आजाद, श्रीमती सरोजनी नायडू आदि सभी नेताओं को नजरबन्द कर दिया गया।

देश में सनसनी फैल गई। जगह-जगह सैकड़ों लोग नारे लगाते—'अंग्रेजो, भारत छोड़ो', 'महात्मा गांधी की जय' और 'इनकिलाब जिन्दाबाद'। हजारों गिरफ्तार होते, फिर दूसरे दिन उनके स्थान पर हजारों लोग नारे लगाने आ जाते।

सन् १८५७ के बाद यह दूसरा अवसर था, जब देश-भर में अंग्रेजी राज्य के विरुद्ध इतना व्यापक आन्दोलन हुआ। आजादी की लौ बहुत तेज हो उठी थी; देश का बच्चा-बच्चा आजादी का दीवाना बन चुका था। हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक और गुजरातसे लेकर बंगाल तक क्रान्ति की लहर फैल चुकी थी।

हजारों लोग गिरफ्तार हुए, हजारों पुलिस की गोलियों से मारे गए और हजारों लोगों ने अंग्रेज राज्य को विफल करने के लिए तोड़-फोड़ की।

अंग्रेजों का शासन डगमगा उठा।

नेहरू जी जेल में थे और उधर नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के नेतृत्व में ४० हजार भारतीय सैनिकों ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। उन्होंने सिंगापुर में 'आजाद हिन्द फौज' बनाई और देश की आजादी के लिए लड़ने लगे।

इस बीच बंगाल में महा-अकाल पड़ा जिसमें १० लाख भारतीय मर गए।

मुहम्मद अली जिन्ना ने पाकिस्तान बनाने के लिए अपना युद्ध और बढ़ा दिया।

भारत में अंग्रेजों के पैर उखड़ चुके थे। वे समझ गए थे कि

उनके अन्तिम दिन आ गए। उधर विश्व-युद्ध समाप्त हुआ और इधर १५ जून १९४५ को १०४० दिन जेल में रहने के बाद नेहरू जी छोड़ दिए गए।

१९४६ के शुरू होते ही भारतीय वायुसेना के अनेक कर्मचारियों ने भूख-हड़ताल कर दी। फिर १८ फरवरी को नौ-सेना मे गदर हो गया। भारत मे स्वतन्त्रता की भावना इतनी तेज हो चुकी थी कि अंग्रेजी शासन किसी भी तरह यहां नहीं टिक सकता था। चुनाव में कांग्रेस बहुत अधिक मतों से जीत चुकी थी। तब वायसराय ने नेहरू जी को अन्तरिम सरकार बनाने को कहा।

२ सितम्बर १९४६ को अन्तरिम सरकार बनी और नेहरू जी बने—उसके पहले प्रधान मन्त्री। अपने जीवन के बहुमूल्य ३,२६२ दिन अंग्रेजों की जेल में बिताने के बाद यह पहला दिन था जब नेहरू जी के हाथ में भारत के शासन की बागडोर दे दी गई थी।

लेकिन मुस्लिमलीग से यह सहन नहीं हुआ। उसने मातम मनाया और देश में 'जेहाद' बोल दिया। लाखों भारतीय मारे गए और घायल हुए। सबसे बड़ा हत्याकाण्ड नवाखली (बंगाल) में हुआ। वहां स्त्रियों, बच्चों, बूढ़ों—किसी को भी नहीं छोड़ा गया। नवाखली का यह खूनी काण्ड सुनकर महात्मा गांधी भागे-भागे वहां पहुंचे।

फिर बिहार में भी दंगे शुरू हो गए। पूरे देश में गृहयुद्ध भड़कने की आशंका पैदा हो गई।

स्वतन्त्रता की मंजिल बिल्कुल निकट पहुंच चुकी थी, परन्तु नवाखली और बिहार में जो हत्याकाण्ड हो रहा था, उसका क्या किया जाए? मुस्लिमलीग की जिद के आगे किसी की न चल सकी।

[illegible] कांग्रेस को यह बात माननी ही पड़ी, जिसे वह अब तक रोके हुए थी। वह था भारत का विभाजन।

गान्धी जी और नेहरू जी को मंजूर करना पड़ा, बड़े बड़े नेताओं के बेहद दुःखद मन। लेकिन इसके अलावा किया भी क्या जा सकता था?

घोषणा कर दी गई कि १५ अगस्त १९४७ को भारत स्वतन्त्र हो जाएगा और उसी दिन उसके दो भाग भी हो जाएंगे—एक भाग होगा भारत और दूसरा होगा पाकिस्तान।

६
स्वतन्त्रता पर खून के छींटे

आखिर निर्धारित दिन निकट आ पहुंचा। १४ अगस्त १९४७ को नेहरू जी ने संविधान-परिषद् में कहा :

"बहुत वर्ष हुए, हमने भाग्य से एक सौदा किया था, और अब प्रतिज्ञा पूरी करने का समय आया है—पूरी तौर पर या जितनी चाहिए उतनी तो नहीं, फिर भी काफी हद तक। जब आधी रात के घण्टे बजेंगे, जबकि सारी दुनिया सोती होगी, उस समय भारत जगकर जीवन और स्वतंत्रता प्राप्त करेगा।"

आधी रात हुई। १४ अगस्त के अन्तिम क्षण बीते और १५ अगस्त के आगमन के घण्टे बजे।

२०० वर्ष की गुलामी की जंजीरें टूट गईं। अंग्रेजों ने भारत

का शासन भारतवासियों को सौंप दिया। नये दिन के साथ भारत का नया जीवन आरम्भ हुआ। नया, बिल्कुल नया जीवन। स्वतन्त्र जीवन।

प्रधानमंत्री नेहरू ने देश के नाम संदेश दिया—"नियत दिवस आ गया है—यह नियत दिवस जिसे भाग्य ने निश्चित किया था' और भारत आज फिर लम्बी नींद और कोशिशों के बाद जागा है और शक्तिशाली, मुक्त तथा स्वतंत्र हुआ है।"

नेहरू जी इस अवसर पर देश के करोड़ों दुखी किसानों और मजदूरों को नहीं भूले। उन्होंने कहा—"भविष्य हमें बुला रहा है। हम कहां जाएंगे और हमारा क्या प्रयत्न होगा? हमारा प्रयत्न होगा साधारण मनुष्य को, भारत के किसानों और मजदूरों को स्वतंत्रता और अवसर दिलाना; एक समृद्ध, जनसत्तात्मक और प्रगतिशील राष्ट्र का निर्माण करना, और ऐसी सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक संस्थाओं की रचना करना, जिनसे कि प्रत्येक पुरुष और स्त्री को न्याय और जीवन की परिपूर्णता प्राप्त हो सके।"

देश के कोने-कोने में स्वतन्त्रता की खुशी की लहर दौड़ रही थी, लेकिन नेहरू जी को अभी भी बहुत कुछ सहना था।

पाकिस्तान बनते ही वहां से शरणार्थियों के झुण्ड-के-झुण्ड भारत आने लगे। लाखों मारे गए, कुछ वहीं रास्ते में। जो भारत तक पहुंचे वे बुरी हालत में थे। स्त्रियों, बच्चों, बूढ़ों और जवानों की कतारें चली आ रही थीं।

भारत में भी दंगे होने लगे। नेहरू जी नई दिल्ली में थे। वे बराबर लोगों से शान्ति की अपील करते रहे।

एक दिन उन्हें पता चला कि दिल्ली के कनॉट प्लेस में दंगा हो गया है। वे तुरन्त कार से वहां पहुंचे। उन्होंने देखा कि कुछ

गुण्डे एक दुकान को लूट रहे हैं और हजारों लोग चुपचाप तमाशा देख रहे हैं।

नेहरू जी से नहीं देखा गया। वे तुरन्त कार से उतरे और उस दुकान की ओर भागे। उनके हाथ में एक छड़ी थी। वे उसी छड़ी को लेकर गुण्डों पर पिल पड़े।

हजारों लोगों ने देखा—स्वतंत्र भारत का प्रथम प्रधानमंत्री अकेले केवल एक छड़ी से इतने अधिक गुण्डों से लड़ रहा है।

गुण्डे भाग गए, दुकान बच गई। प्रधानमंत्री वापस लौट आए।

१५ अगस्त को जब सारा देश स्वतंत्रता-दिवस मना रहा था, तब भी राष्ट्रपिता गांधी बंगाल के दीन-दुखियों और पीड़ितों की सेवा में लगे थे। भारत-विभाजन का दिन उनके जीवन का सबसे कष्टपूर्ण दिन था। भारत माता के दो खण्ड हो गए—इसका दु:ख उन्हें इतना अधिक था कि जिस स्वतंत्रता के लिए जीवन-भर लड़ते रहे, उसे पाने पर खुशी तक न मना सके।

६ सितम्बर को अत्यन्त दुखी हृदय को लेकर राष्ट्रपिता दिल्ली पहुंचे। उनकी करुण मूर्ति नेहरू जी से नहीं देखी गई। उन्होंने बड़े दुखी स्वर में कहा—"आज हमारे नेता महात्मा जी कलकत्ते से आए हैं। जब मैं उनके पास थोड़ी देर के लिए बैठा तो आसानी से आंख न मिला पाया। मुझे शर्म मालूम होती थी कि मैं प्रधानमंत्री की जिम्मेदारी पूरी तरह नहीं अदा कर पाया। देश में जहां भी जो कुछ हो रहा है, उसे मैं अपना कुसूर मानता हूं। हिन्दुस्तान का महान व्यक्ति आज यहां क्या देख रहा है?"

देश में दंगे समाप्त नहीं हुए। तब १३ जनवरी, १९४८ को राष्ट्रपिता ने आमरण अनशन कर दिया।

देश-भर में सन्नाटा छा गया। नेताओं में भगदड़ मच गई।

बेचैन होने लगी।

तीन दिन बीते। राष्ट्रपिता का स्वास्थ्य गिरने लगा। दो दिन और बीत गए। हालत और गिर गई।

नेहरू जी से नहीं देखा गया। १८ जनवरी को उन्होंने भी प्रतिज्ञा की कि वे भी एक दिन का उपवास रखेंगे।

डा० राजेन्द्र प्रसाद, मौलाना आजाद आदि नेता लगभग १०० प्रतिनिधियों को लेकर राष्ट्रपिता के पास पहुंचे। उनसे अनशन तोड़ने की प्रार्थना की, वादे किए, कसमें खाईं। राष्ट्रपिता का कोमल हृदय पिघला। उन्होंने उपवास तोड़ दिया। मौलाना आजाद ने उन्हें सन्तरे का रस पिलाया।

नेहरू जी मूक हो यह सब देखते रहे। राष्ट्रपिता ने उपवास तोड़ा तो उनकी आंखें खिल गईं, गला भर आया। पिता के प्यार के आगे पुत्र जैसे मचलता है, वैसे ही नेहरू जी का मन मचलने को चाहा।

उन्होंने राष्ट्रपिता से मुस्कराकर कहा, "देखिए, मैं आज उपवास कर रहा था। अब मुझे समय से पहले ही अपना उपवास तोड़ देना पड़ेगा।"

राष्ट्रपिता हंस पड़े। उन्होंने वात्सल्यपूर्ण दृष्टि से नेहरू जी की ओर देखा। उनका मानस-पुत्र, उनका उत्तराधिकारी, भारत का प्रधानमंत्री होते हुए भी आज कितना मासूम, कितना निश्छल और कितना नन्हा-सा बालक लग रहा है!

राष्ट्रपिता अब खुश थे। सब लोगों ने संतोष की सांस ली और अपने-अपने घर चल दिए।

शाम को राष्ट्रपिता ने नेहरू जी को एक पर्चे पर लिखकर भेजा :

"चि० जवाहरलाल, उपवास छोड़ो।'''बहुत वर्ष जियो और हिंद के जवाहर बने रहो!"

परन्तु कौन जानता था कि वह बापू, जिसने इतनी कुरबानियां की, जिसने हमें स्वतंत्रता दिखाई, और आज स्वतत्रता दिखान के बाद जो सत्ता, अधिकार आदि सबसे दूर होकर विरक्त तपस्वी का जीवन बिता रहा है, उसी बापू को कोई अदूरदर्शी गोली मार देगा !

३० जनवरी, १६४८ की वह कलंकित शाम···

शाम के ५ बजे थे। बापू बिड़ला-भवन में प्रार्थना-सभा में जा रहे थे। तभी एक व्यक्ति ने पिस्तौल निकाली और दनादन तीन गोलियां बापू की छाती पर दाग दी।

बापू 'हे राम' कहकर गिर पड़े और फिर कभी नही उठे।

नेहरू जी के दिल पर यह सबसे बड़ा आघात था। १६३१ में उनके पिता श्री मोतीलाल की मृत्यु हुई थी और आज उनके आध्यात्मिक तथा राजनीतिक पिता भी चल बसे थे। वे फफक-फफककर रो पड़े।

उन्होंने अपने संदेश में कहा—"मित्रो और साथियो ! हमारे जीवन से प्रकाश जाता रहा और सब तरफ अंधेरा छा गया है। मैं नहीं जानता मैं आपसे क्या कहूं। हमारे प्रिय नेता, जिन्हे हम बापू कहते थे, जो राष्ट्रपिता थे, अब नहीं रहे। शायद मेरा ऐसा कहना गलत है। फिर भी हम उन्हें नही देखेंगे, जैसा कि हम इन बहुत वर्षों से देखते आए थे। उनके पास दौड़कर सलाह लेने या उनसे सांत्वना पाने के लिए अब हम न जा सकेंगे। यह एक भयानक आघात है—केवल मेरे लिए ही नही, बल्कि इस देश के करोड़ों लोगों के लिए भी।"

फिर उन्होंने कहा—"मैंने कहा कि प्रकाश जाता रहा, लेकिन मैंने गलत कहा। क्योंकि वह प्रकाश, जिसने इस देश को आलोकित किया, कोई साधारण प्रकाश नहीं था। जिस प्रकाश ने इस देश को अनेक वर्षों से आलोकित किया है, वह भविष्य में भी अनेक

वर्षों तक इस देश को आलोकित करता रहेगा और एक हज़ा
वर्ष बाद भी यह प्रकाश इस देश में दिखाई देगा और दुनिया इ
देखेगी तथा यह अनगिनत हृदयों को शान्ति प्रदान करेगा।'''

एक युग समाप्त हो गया था। सत्य और अहिंसा का पुजारं
चला गया था। बीसवीं शताब्दी का बुद्ध अपनी अनन्त यात्रा प
चल दिया।

नेहरू अकेले रह गए थे।

७

विश्व-शान्ति का संदेश-वाहक

बापू संत थे और जवाहरलाल कर्मठ सिपहसालार। ए
धर्मप्राण व्यक्ति थे और दूसरे कर्मप्रधान। एक की आवा
भगवान बुद्ध की करुणा थी और दूसरे की आवाज में अत्य
और आक्रान्ता के विरुद्ध लड़ने वाले सम्राट अशोक का जं
दोनों की भाषा अलग-अलग थी, लेकिन पथ एक।

इसीलिए बापू ने कहा था—'वह कहता है कि मेरी ·
उसकी समझ में नहीं आती। वह यह भी कहता है कि उ
भाषा मैं नहीं समझता। यह सही हो या न हो, किन्तु हृदयों
एकता में भाषा बाधक नहीं होती। और मैं जानता हूं कि
मैं चला जाऊंगा, तब वह मेरी ही भाषा बोलेगा।''

कितना सच कहा था बापू ने! वे जवाहर, जो स्वतंत्रता
प्राप्ति तक कर्मठ सैनिक की तरह स्वतंत्रता-संग्राम में लड़ने
और अपनी ओजभरी वाणी से समस्त भारत में जोश की लह
फैलाते रहे, वही जवाहर बापू के जाने के बाद मन, वचन

कर्म से विश्व-शान्ति के पैगम्बर बन गए।

'जब मैं चला जाऊंगा, तब वह मेरी ही भाषा बोलेगा', यही तो कहा था बापू ने। वह भाषा कौन-सी थी? वह भाषा थी—भगवान बुद्ध की, विश्व-शान्ति की, विश्व-बन्धुत्व की, सह-अस्तित्व की, करुणा और प्रेम की, दया और ममता की।

बहुत समय की बात है। नेहरू जी के दर्शनों के लिए बहुत बड़ी भीड़ जमा हो गई थी। नेहरू जी की कार चली जा रही थी। लोग एक-दूसरे को धकेलकर आगे बढ़ने का प्रयत्न कर रहे थे। इतने में एक व्यक्ति गिर पड़ा, दूसरा व्यक्ति उसकी पीठ पर चढ़कर नेहरू जी को देखने लगा। तभी नेहरू जी की निगाह उस पर पड़ गई। वे तुरन्त कार का दरवाजा खोलकर बाहर आ गए और उस व्यक्ति से तिलमिलाकर बोले, "मुझे क्या देखना है? उसे देख जो तेरे पैरों तले कुचला जा रहा है।"

दूसरों को कुचलने वाले, दूसरों को गुलाम बनाने वाले, दूसरों का शोषण करने वाले, दूसरों की पीठ पर खड़े होकर ऊंचा चढ़ने वाले हमेशा-हमेशा नेहरू जी के शत्रु रहे।

इसीलिए भारत के स्वतन्त्र होने के बाद नेहरू जी ने समग्र एशिया में जागरण का नारा लगाया, उपनिवेशवाद के विरुद्ध आवाज उठाई और दुनिया-भर को विश्व-शान्ति का सन्देश दिया।

अक्तूबर १९४८ में राष्ट्रमण्डल-देशों के प्रधानमन्त्री-सम्मेलन में भाग लेने के बाद जब वे लौट रहे थे, तब उन्हें पेरिस में रुकना पड़ा। वहां सयुक्त राष्ट्र महासभा का अधिवेशन चल रहा था। नेहरू जी को उसमें निमन्त्रित किया गया।

नेहरू जी ने ३ नवम्बर, १९४८ को सयुक्त राष्ट्रसघ में भाषण देते हुए कहा—

"....यह सभा दो महायुद्धों के बाद और उन युद्धों के

परिणामस्वरूप अस्तित्व में आई। इन दो युद्धों की क्या शिक्षा रही है? निश्चय ही इन युद्धों ने सिखाया है कि घृणा और हिंसा द्वारा आप शान्ति का निर्माण नहीं कर सकते।...."

दुनिया के अनेक देशों के प्रतिनिधि एकटक उनकी ओर देख रहे थे, और वे कहते जा रहे थे—

"एशिया में हम लोगों ने, जिन्होंने उपनिवेशवाद की सब बुराइयां झेली हैं, हरएक उपनिवेश की आजादी के लिए प्रतिज्ञा कर ली है।...कोई भी शक्ति, चाहे छोटी हो या बड़ी, जो इन लोगों की आजादी में बाधा डालती है, वह संसार की शान्ति के हक में अच्छा नहीं करती।...."

यह एक नए एशिया की आवाज थी, जागृत एशिया की और एशिया की इस आवाज को बुलन्द कर रहे थे—नवोदित स्वतंत्र राष्ट्र भारत के प्रधानमंत्री नेहरू।

वह देश जो साल-भर पहले तक गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ था, उसका प्रधानमंत्री आज दुनिया के प्रतिनिधियों के सामने खड़ा गुलामी और रंगभेद के विरुद्ध अपनी आवाज उठा रहा था, युद्ध-लोलुप देशों की भर्त्सना कर रहा था और विश्व-शान्ति का संदेश दे रहा था। सबके कान एकाग्र होकर उसके एक-एक शब्द को ग्रहण कर रहे थे, एक-एक वाक्य के महत्व को समझ रहे थे। राष्ट्रसंघ के इतिहास में यह पहला अवसर था, जब सभी प्रतिनिधियों ने किसी के भाषण को इतनी उत्सुकता, इतनी शान्ति और इतनी गम्भीरता से सुना।

और नेहरू? जो अब तक अपने देश के लोकप्रिय नेता थे, अब विश्वनेता बन गए थे; गुलाम देशों को स्वतंत्र बनाने वाले ... बन गए थे; दुनिया-भर में शान्ति का संदेश देने वाले दूत

बन गए थे।

अनेक देशों से उनके पास निमंत्रण आने लगे। गुलाम देश के लोग उनसे सलाह लेने के लिए पत्र भेजने लगे ; बड़े-बड़े विद्वान और विचारक उनसे विश्व को युद्ध से बचाने के लिये प्रार्थना करने लगे। जो नेहरू भारत की जनता की आंखों के तारे थे, उन पर अब समस्त विश्व की आंखें टिक गई थी। सब चाहते थे कि नेहरू उनके देश आएं और प्रेम तथा शान्ति का संदेश दें।

तब नेहरू जी ने सबसे पहले अमेरिका जाने का निर्णय किया। यह वह देश था, जो सबसे अधिक समृद्ध था और साथ ही जिससे युद्ध का सबसे अधिक खतरा था।

अमेरिका-भर में उनके स्वागत की तैयारी होने लगी। सभी प्रबुद्ध-गण और आम जनता आतुरता से उनके आगमन की प्रतीक्षा करने लगी।

अमेरिका के प्रसिद्ध पत्र 'न्यूयॉर्क टाइम्स' ने लिखा—"किसी व्यक्ति की लोकप्रियता यदि इस बात से आंकी जाए कि उसके देशवासी उसे स्वेच्छा से कितना सहयोग देते हैं, तो अमेरिका की जनता पहली बार दुनिया के सबसे अधिक लोकप्रिय व्यक्ति के दर्शन करेगी।"

बात सही थी। नेहरू जी को भारतीयों से जितना प्यार मिला, जितना सम्मान मिला, उतना दुनिया में शायद ही किसी देश ने अपने किसी नेता को दिया हो। यही भारत की जनता की आंखों के तारे नेहरू ११ अक्तूबर, १९४९ को जब अमेरिका के हवाई अड्डे पर उतरे, तो लाखों व्यक्तियों की आंखें उत्सुकता से उन पर टिक गई। अमेरिका के राष्ट्रपति ट्रूमैन ने आगे बढ़कर उनसे हाथ मिलाया ; अनेक उच्चाधिकारियों ने उनका स्वागत किया; १९ तोपों की सलामी दी गई ; 'गार्ड ऑफ आनर' दिया गया।

१३ अक्तूबर को नेहरू जी को अमेरिका की संसद 'सीनेट'

में अपने विचार प्रकट करने के लिए आना था। सारा हाल और दर्शक-गैलरी खचाखच भरी थी। तिल रखने को भी जगह न थी। शायद यह पहला अवसर था जब उस स्थान पर एक साथ इतने व्यक्ति इकट्ठे हुए हों। और ऐसा होना स्वाभाविक ही था। नवोदित महान राष्ट्र का लोकप्रिय नेता और शान्तिदूत जो आने वाला था।

नेहरू जी पहुंचे। समस्त व्यक्तियों ने खड़े होकर तालियां बजाते हुए उनका स्वागत किया। नेहरू जी हाथ जोड़ते हुए उस विशेष स्थान तक पहुंचे, जहां से उन्हें भाषण देना था।

वे समस्त उपस्थित-गणों को देख रहे थे और समस्त उपस्थित-गण उन्हें। उनकी आंखों की प्यार की भाषा सबने पढ़ी, सबका प्यार उन पर उमड़ पड़ा।

नेहरू जी कह रहे थे—"आपकी महान सफलताओं से कुछ सीखने के लिए मैं आपके देश आया हूं और इसलिए भी आया हूं कि आपके प्रति अपने देश की शुभकामनाएं प्रकट करूं। मेरी यात्रा दोनों देशों की जनता को एक-दूसरे को समझने में सहायक हो सकती है और उन्हें मित्रता के ऐसे सुदृढ़ बन्धन में बांध सकती है, जो अप्रत्यक्ष होते हैं, लेकिन जो शारीरिक बन्धनों से अधिक मजबूत होते हैं और अलग-अलग प्रकार के देशों को एक सूत्र में बांध देते हैं…।"

श्रोता गद्‌गद हो गए। यह भारत की ३८ करोड़ जनता का संदेश था, जो नेहरू जी के शब्दों में बोल रहा था। यह भारत की सच्ची आवाज थी।

समस्त श्रोता सुन रहे थे, भारत-मां के उस लाड़ले बेटे की आवाज। राष्ट्रपिता गांधी ने एक बार कहा था कि 'जब मैं नहीं रहूंगा, तब जवाहरलाल मेरी ही भाषा बोलेगा।' आज वह बात सच निकल रही थी। नेहरू जी अमेरिका के इतने विशाल सीनेट

में गांधी जी की ही भाषा बोल रहे थे, सत्य और अहिंसा की, प्यार और प्रेम की, विश्वबन्धुत्व और शान्ति की। वे कहते जा रहे थे—

"विश्व-शान्ति की रक्षा और मानव-स्वतन्त्रता का विकास ही हमारी विदेश नीति का उद्देश्य है। दो दुखान्त युद्ध हुए, जिससे अब युद्ध की कोई आवश्यकता नहीं रह गई है। शान्ति के बिना विजय बेकार होती है। ऐसी दशा में विजेता और विजित, दोनों भूतकाल के गहरे और दुखदायी घावों से तथा भविष्य के भय से चिन्तित रहते हैं। क्या आज की दुनिया के बारे में यह बात गलत है?...क्या यह दुखद स्थिति बनी रहनी चाहिए? क्या विज्ञान और धन की शक्ति मानव-समाज के सर्वनाश के लिए खर्च की जानी चाहिए? प्रत्येक राष्ट्र को, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, इस महत्वपूर्ण प्रश्न का उत्तर देना है। जो राष्ट्र जितना बड़ा है, उसकी जिम्मेदारी भी उतनी ही बड़ी हो जाती है।"

नेहरू जी के इस भाषण से दुनिया-भर में तहलका मच गया। कल तक जो स्वतन्त्रता का मसीहा था, आज वह शान्ति का भी मसीहा बन गया था। जिसे अब तक मुख्यतः भारत का नेता माना जाता था, आज वह विश्व-भर का नेता बन गया था।

न्यूयॉर्क में जब उनका नागरिक अभिनन्दन किया गया, तब वहां के मेयर ने घोषणा की—"आज वह व्यक्ति हमारे सामने है जिसने बिना बल-प्रयोग के स्वतन्त्रता प्राप्त करने की शिक्षा दी है। वह व्यक्ति हमारे सामने है, जो इस दुनिया में उस शाश्वत सत्य का प्रतिनिधित्व करता है, जिससे शान्ति प्राप्त हो सकती है—न केवल भारत को, वरन् दुनिया के समस्त राष्ट्रों को। ऐसे महान व्यक्ति का स्वागत करते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है।"

फिर तो नेहरू जी अमेरिका में जहां-जहां गए, जनता उनके स्वागत में आंखें बिछा दी। वे तीन सप्ताह तक अमेरिक और कनाडा के अनेक स्थानों पर शान्ति और विश्व-बन्धुत्व क सन्देश देते रहे।

८
संसार युद्ध के कगार पर

१९५० में सारा संसार धीरे-धीरे युद्ध के कगार पर पहुंच गया था। कोरिया के प्रश्न को लेकर दुनिया की सबसे बड़ी दो शक्तियां—अमेरिका और रूस—आपस में लड़ मरने को तैयार हो गई। इनमे युद्ध शुरू होने का मतलब था—तीसरे विश्वयुद्ध की शुरूआत और वह तीसरा विश्वयुद्ध इतना भयंकर होता कि सम्भवतः समस्त मानव-जाति ही इस संसार से उठ जाती। एक अणुबम ने हिरोशिमा में जो कुछ किया, वही सब न जाने कितने देशों में होता।

बात यह थी कि दूसरे विश्वयुद्ध से पहले कोरिया एक राष्ट्र था। जापान और चीन के बीच दक्षिण की ओर स्थित यह छोटा-सा देश—कोरिया—दूसरे विश्वयुद्ध में जापान से हार गया था। बाद में रूस, ब्रिटेन और अमेरिका ने मिलकर एक ओर जर्मनी को हराया और दूसरी ओर जापान को। कोरिया को उत्तर की ओर से रूस जीतताहुआ आया और दक्षिण की ओर से अमेरिका। इन दोनों देशों ने कोरिया को दो भागों में बांट दिया। कोरिया के सीने पर बटवारे की जो रेखा डाली गई, वह थी

३८ अक्षांश की। इस रेखा के उत्तर में रूस की फौज का शासन हो गया और दक्षिण में अमरीकी फौज का।

धीरे-धीरे दोनों फौजों में सीमा को लेकर मुठभेड़ होने लगी और २५ जून, १९५० को वहां युद्ध शुरू हो गया।

नेहरू जी ने १३ जुलाई, १९५० को रूस के प्रधानमन्त्री को पत्र लिखा कि वे कोरिया में युद्ध बन्द कराने का प्रयत्न करें। रूस के प्रधानमन्त्री का उत्तर आया कि वे भी शान्ति स्थापित करने के पक्ष में हैं।

कोरिया का मामला संयुक्त राष्ट्रसंघ में गया। उसने तुरन्त वहां फौज भेज दी। इस फौज में अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस आदि देशों के सैनिक थे।

भारत के प्रधानमन्त्री नेहरू के सामने जब सैनिक भेजने का सवाल आया तो उन्होंने साफ मना कर दिया। वे जानते थे कि कोरिया में सैनिक भेजने के माने हैं—युद्ध में भाग लेना। जो व्यक्ति दुनिया को शान्ति का संदेश दे रहा था, वह युद्ध के लिए सैनिक क्यों भेजता? लेकिन कोरिया में जो सैनिक घायल हो रहे थे, उनका क्या होगा? यह सोचकर नेहरू जी ने वहां चिकित्सा-दल भेज दिया।

संयुक्त राष्ट्रसंघ की सेना दक्षिण कोरिया पहुंची। उसने उत्तरी कोरिया के आक्रमणकारियों को ३८ अक्षांश से बाहर खदेड़ दिया और इसके बाद जोश में आकर खुद भी ३८ अक्षांश पार कर उत्तर की ओर बढ़ने लगी।

नेहरू जी इन सब घटनाओं का बारीकी से अध्ययन कर रहे थे। उन्होंने तुरन्त संयुक्त राष्ट्रसंघ की सेना को चेतावनी दी कि वह ३८ अक्षांश पार न करे और न उत्तरी कोरिया में घुसे, अन्यथा उत्तरी कोरिया की समस्त जनता संयुक्त राष्ट्रसंघ के विरुद्ध हो जाएगी।

नेहरू जी की भविष्यवाणी सच निकली। उत्तरी कोरिया में संयुक्त राष्ट्रसंघ की सेना के घुसते ही उत्तरी कोरिया की समग्र जनता सर पर कफन बांधे सैनिकों से लड़ने मैदान में आ गई। विमानों से बम गिरने लगे, सैनिक कट मरने लगे। चारों ओर हाहाकार मच गया। संयुक्त राष्ट्रसंघ बदनाम हो गया।

तब दुनिया के नेताओं ने महसूस किया कि भारत के नेता नेहरू कितने दूरदर्शी हैं। वे राजनीति और जनता की भावना को कितनी गहराई से समझते हैं।

इसके बाद ही वारसा में दूसरा विश्व-शान्ति-सम्मेलन हुआ, जिसमें ८० देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन ने अपने प्रस्ताव में कहा—"युद्ध का खतरा स्त्रियों, बच्चों, पुरुषों के—समस्त मानव-जाति के सिर पर मंडरा रहा है। शान्ति के आगमन की प्रतीक्षा नहीं की जाती, उसे जीतने के लिए संघर्ष करना होता है। आओ, हम संयुक्त रूप से प्रयास करें और युद्ध को बन्द करने की मांग करें, जो आज कोरिया को नष्ट-भ्रष्ट कर रहा है और जो समस्त संसार को अपनी लपटों में लेने वाला है।"

नेहरू जी ने भी स्वतन्त्रता-दिवस पर १५ अगस्त, १९५० को लाल किले से भाषण देते हुए कहा—"....आप जानते हैं कि दुनिया में अजीब हालत है। एशिया के एक कोने में लड़ाई हो रही है। हालांकि लड़ाई एक छोटे मुल्क में है, फिर भी भयानक लड़ाई है। मालूम नहीं कब तक वह चले, मालूम नहीं वह बढ़े या वहीं रहे। हमारी कोशिश है वह बढ़े नहीं, दुनिया-भर में आग न लगे। हमारी कोशिश है कि वह जल्दी-से-जल्दी रुक जाए....।"

काफी अधिक प्रयत्नों के बाद २७ जुलाई, १९५३ को कोरिया में युद्ध-विराम का समझौता हुआ। वहां शान्ति स्थापित करने

का भार भारत को सौंपा गया। तब ५ अगस्त को पहला भारतीय शान्ति-दस्ता कोरिया पहुंचा। वहां हिन्द नगर बनाया गया और २४ सितम्बर तक समस्त युद्ध-बन्दियों को भारतीय सेना ने अपनी देख-रेख में ले लिया।

इस तरह नेहरू जी की दूरदर्शिता और शान्ति की नीति से समस्त संसार युद्ध के कगार तक पहुंचने के बाद भी बच गया।

लेकिन इसी बीच एक और घटना हो गई। १९४९ में चीन में गणराज्य की स्थापना हुई और १९५० मे उसने तिब्बत में अपनी फौजें भजकर उस पर कब्जा कर लिया। नेहरू जी कुछ न कह सके। वह चीन और तिब्बत का घरेलू मामला था। दूसरे के घरेलू मामलों में नेहरू जी दखल नहीं देना चाहते थे। चीन बराबर भारत से मित्रता का ढोंग रच रहा था। उस समय नेहरूजी को क्या मालूम था कि चीन के दिल मे कितना कपट है।

जून १९५४ में चीन का प्रधानमन्त्री चाऊ-एन-लाई भारत आया। यहां जितनी धूमधाम से उसका स्वागत हुआ, उतना शायद उसका अपने देश में भी नहीं हुआ होगा।

फिर दोनों ने पंचशील पर हस्ताक्षर किए जिस में ये सिद्धान्त रखे गए: (१) एक-दूसरे की प्रादेशिक अखण्डता और प्रभुसत्ता का सम्मान करना। (२) एक-दूसरे के विरुद्ध आक्रामक कार्रवाई न करना। (३) एक-दूसरे के घरेलू मामलों में हस्तक्षेप न करना। (४) समानता और परस्पर हित की नीति का पालन करना, और (५) शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति का पालन करना।

फिर नेहरू जी अक्तूबर १९५४ में चीन गए। वहां उन्होंने कहा—"मैं यहां शान्ति और सद्भावना का दूत बनकर आया हूं…"

नेहरू जी उसके बाद वियतनाम और इण्डोनेशिया गए अ
वहां भी उन्होंने शान्ति और सद्भावना का सन्देश दिया।

जब युद्धप्रिय देशों ने अपने संगठन को मजबूत करने अं
कमजोर देशों को दबाने के लिए एशिया के दक्षिण-पूर्वी क्षेत्र
'दक्षिण-पूर्व एशिया संधि संगठन' (सीएटो) बनाया और पश्चिम
क्षेत्र में बगदाद-सन्धि की, तो समस्त एशिया के छोटे-छोटे दे
इन सैनिक-सधियों से थर्रा उठे। उन्हें लगा कि एशिया अब तीस
विश्वयुद्ध का केन्द्र बन जाएगा। तब नेहरू जी ने इन सैनिक
संधियों के विरुद्ध अपनी आवाज उठाई—"यह साफ जाहिर ह
कि बगदाद और सीएटो जैसी सैनिक-संधियों का रवैया गलत
है, खतरनाक है, नुकसानदायक है। यह सही तरीकों को रोकती
और गलत तरीकों को बढ़ावा देती हैं।'''हमारा विचार है कि
ये संधियां दुनिया को गलत रास्ते पर ले जाती हैं।"

विश्व-नेता नेहरू की यह आवाज दुनिया-भर में गूंज उठी।
एशिया और अफ्रीका के शान्तिप्रिय देश शान्ति-सम्मेलन बुलाने
का प्रयास करने लगे। नेहरू जी की प्रेरणा से पहले दिल्ली
में एशियाई सम्मेलन हुआ, जिसमें एशिया के १३ देशों ने भाग
लिया।

फिर इण्डोनेशिया में १८ से २४ अप्रैल, १९५५ तक दूसरा
शान्ति-सम्मेलन हुआ, जिसे बांडुंग सम्मेलन कहा जाता है।
इसमें एशिया और अफ्रीका के २९ देशों ने भाग लिया। इण्डो-
नेशिया के राष्ट्रपति सुकर्ण ने सम्मेलन का उद्घाटन करते
हुए कहा, "मानव-इतिहास में गैर-गोरी जातियों का यह पहला
सम्मेलन है।"

वास्तव में इतना बड़ा शान्ति-सम्मेलन पहले कभी नहीं
हुआ था। यह नेहरू जी की ही प्रेरणा थी, जिससे समस्त एशिया
और अफ्रीका जाग उठा था और दुनिया के युद्धलोलुप बड़े-बड़े

देशों को शान्ति और प्रेम का सन्देश दे रहा था।

सम्मेलन ने अपने प्रस्ताव में कहा—"अणुशक्ति का शान्ति-पूर्ण निर्माण में इस्तेमाल किया जाना चाहिए।···मानवता को पूर्ण विनाश से बचाने के लिए जरूरी है कि निरस्त्रीकरण किया जाए और अणु-हथियारों के निर्माण तथा प्रयोग पर रोक लगाई जाए।···उपनिवेशवाद का अन्त किया जाए।···विश्व-शान्ति के लिए पंचशील का पालन किया जाए···।"

यह सम्मेलन नेहरू जी की देन थी। जो नेहरू कोरिया-युद्ध के समय विश्व-नेता और शान्ति-दूत के रूप में उभर रहे थे, वे अब पूरी तरह विश्व-नेता बन चुके थे। संसार के सैकड़ों पराजित और पीड़ित देश मार्गदर्शन के लिए उनकी ओर देखने लगे, बड़े-बड़े देश उनसे सलाह लेने लगे; उनके एक-एक शब्द पर दुनिया गम्भीरता से विचार करने लगी। उनके व्यक्तित्व का प्रभाव पूरे संसार में फैल गया; उनकी महानता सर्वत्र में विदित होने लगी; उनकी शान्ति की ज्योति पूरे संसार में जगमगाने लगी।

६
समाजवाद के पथ पर

एक बार किसी ने शंका प्रकट की थी कि—"पण्डित जवाहर-लाल नेहरू सारी दुनिया में तो शान्ति का नारा लगाते हैं, गुलाम देशों को आजाद होने की प्रेरणा देते हैं, लेकिन वह स्वयं अपने

भारत के लिए क्या कर रहे हैं ?"

शंका प्रकट करने वाले सज्जन शायद भूल गए थे कि पण्डित नेहरू देश की उन्नति के लिए जो कुछ भी कर रहे थे, वह दो-चार हजार व्यक्तियों के लिए नहीं, बल्कि देश के चालीस करोड़ लोगों के लिए कर रहे थे। उन्होंने प्रधानमन्त्री की हैसियत से स्वतन्त्रता-दिवस को लाल किले से जो पहला भाषण दिया था उसी में उन्होंने स्पष्ट कर दिया था—"जो जमींदारी में प्रथा है, उसको हटाने की कोशिश कर रहे हैं। इस काम को हमें जल्दी करना है और फिर हमें सारे देश में बहुत-कुछ आर्थिक तरक्की करनी है, कारखाने खोलने हैं, घरेलू उद्योग-धन्धे बढ़ाने हैं, जिससे देश की धन-दौलत बढ़े और इस तरह से नहीं बढ़े कि वह थोड़ी-सी जेबों में जाए, बल्कि आम जनता को उससे फायदा हो।

जनता के उद्धार के लिए देश में अप्रैल १९५१ से पंचवर्षीय योजना शुरू हुई। उसी साल नेहरू जी ने लाल किले से घोषणा की—"आप शायद जानते हों कि अभी कुछ दिन हुए एक योजना, एक पांच वर्ष की योजना या प्लान, नेशनल प्लान, राष्ट्रीय योजना निकाली गई, जिसका मतलब है कि किस तरह से हम इस बड़ी लड़ाई को जीतें। 'बड़ी लड़ाई यानी हिन्दुस्तान की गरीबी के खिलाफ और बेकारी के खिलाफ लड़ाई। किस तरह से हिन्दुस्तान में ज्यादा काम हो और ज्यादा पैदावार हो, और ज्यादा धन-दौलत निकले, जो आम लोगों में जाए। बड़ा काम है, थोड़े-से आदमियों का नहीं। चालीस करोड़ आदमियों के लिए, एक बड़ी योजना बहुत सोच-विचार के बाद बनी है।"

तब देश ने एक नई करवट ली, वह नई दिशा की ओर बढ़ने लगा, उन्नति और समृद्धि की ओर। पैदावार बढ़ाने के लिए आन्दोलन किया गया, नए कल-कारखाने लगाए गए, भाखड़ा-नंगल, दामोदर घाटी योजना आदि बड़ी-बड़ी योजनाएं

बनने लगी। गांव में सम्पूर्ण लोकतन्त्र के लिए पंचायती राज की स्थापना हुई। सामुदायिक विकास शुरू हुआ। दुनिया ने देखा कि भारत समाजवाद की ओर बढ़ रहा है।

कभी गांधी जी ने कहा था कि—'मेरे बाद जवाहरलाल मेरी ही भाषा बोलेगा। उन्हीं गांधी जी ने कल्पना की थी कि हरेक गांव अपने मे सम्पूर्ण लोकतंत्र होना चाहिए। अब नेहरू जी गांधी जी की भाषा में ही बोलने लगे थे और सामुदायिक विकास तथा पंचायती राज के द्वारा गांव-गांव में लोकतंत्र की स्थापना करने लगे थे। इन सामुदायिक केन्द्रों के बारे में नेहरू जी ने अपने उद्गार प्रकट किए—"देश-भर में अब ये मानवीय सक्रियता के केन्द्र हैं और ये केन्द्र दीपक की तरह अपने आसपास के अंधेरे को दूर कर रहे हैं। इन्हें बढ़ना चाहिए और इतना बढ़ना चाहि[illegible] कि पूरी भारतभूमि में प्रकाश फैल जाए।"

पण्डित नेहरू देश की बागडोर थामे कभी शहर में जाते, कभी गांव में। जगह-जगह वे देश की उन्नति के लिए, देश की समृद्धि के लिए लोगों को प्रेरित करते। जनता-प्रेमी, जनता के बीच जाकर जनता का ही बन जाता। और जनता भी दीवानों की तरह लाखों की संख्या में उनके दर्शन करने, उनके भाषण सुनने आती।

एक बार वे दक्षिण भारत की यात्रा कर रहे थे। पाण्डिचेरी स्टेशन पर ट्रेन रुकी। हजारों की संख्या में लोग उनके दर्शन करने आए थे। लेकिन पुलिस उन्हें स्टेशन के अन्दर नहीं आने दे रही थी। नेहरू जी को सुनाई दिया—'नेहरू जिन्दाबाद।' लगता था जैसे हजारों आदमी एक साथ नारे लगा रहे हों। नेहरू जी ने खिड़की से बाहर झांका, लेकिन वहां उन्हें कोई नहीं दिखाई दिया। वे समझ गए कि पुलिस जनता को स्टेशन के

अन्दर नहीं आने दे रही है। वे पुलिस वालों पर नाराज होकर बोले, "मैं पुलिसमैनों को देखना पसन्द नहीं करता। मुझे मेरी जनता चाहिए। वह कहा है ?"

यह कहकर नेहरू जी रेल के डिब्बे से बाहर कूद पड़े और सीधे वहां चल दिये, जहां हजारों की सख्या में लोग खड़े थे अजीब दृश्य था। सीढ़ी पर खड़े नेहरू जी मुस्करा रहे हैं और नेहरू-प्रेमी जनता उन्हें मुस्कराते देख जिन्दाबाद के नारे लगाए जा रही है।

कौन होगा ऐसा व्यक्ति, जिसने अपनी जनता से इतना प्यार किया हो और कौन होगा ऐसा व्यक्ति, जिसे जनता ने इतना प्यार दिया हो ? कौन होगा ऐसा व्यक्ति, जिसने जनता के हित के लिए अपना सर्वस्व त्याग दिया हो और फिर भी जो जनता के प्यार से इतना सम्पन्न और समृद्ध रहा हो ?

मायथान बांध का काम जोर-शोर से चल रहा था। नेहरू जी देखने पहुंचे और मजदूरों से घुल-मिलकर बात करने लगे। एक मजदूर से उन्होंने पूछा, "तुम काम क्यों करते हो ?"

"पेट की खातिर।" मजदूर ने उत्तर दिया।

यह उत्तर सुनकर नेहरू जी को बड़ी ग्लानि हुई। उन्होंने अपने पीछे खड़े इंजीनियरों से नाराज होकर कहा, "आप लोगों ने देश की इज्जत धूल में मिला दी। इतने दिनों की आजादी के बाद भी यह नहीं समझ सके कि काम देश के निर्माण के लिए होना है।"

बेचारे इंजीनियर शर्म से सिर झुकाकर रह गए।

देश का निर्माण—यही नेहरू जी का सबसे पहला मकसद रहा। इसीलिए मस्मात में जब जेल के एक कुएं से नेहरू जी का

सफेद अचकन पर तेल के धब्बे पड़ गए, तो उन्होंने बड़े गर्व से मुस्कराकर कहा था, "मैं इसी पोशाक में संसद की बैठक मे जाऊंगा। इससे सब लोगों को मालूम हो जाएगा कि हमारे पास अब अपना तेल हो गया है।"

इतना गर्व था नेहरू जी को अपने देश पर, अपने देश के प्राकृतिक साधनों पर। देश में पहले कहीं भी पेट्रोल और मिट्टी के तेल के कुएं नही थे। नेहरू जी की प्रेरणा से अनेक जगह खोज की गई और तब पता चला कि खम्भात और अंकलेश्वर में खोदने पर तेल मिल सकता है। इस सूचना से ही नेहरू जी गर्व से फूल उठे थे कि अब भारत को पेट्रोल या मिट्टी के तेल के लिए दूसरे देशों का मुंह नहीं ताकना पड़ेगा।

उनके प्रयत्नों से ही भाखड़ा बांध बना, दामोदर घाटी योजना चली; मायथान, हीराकुण्ड, नागार्जुन सागर, रेंड, कोसी आदि अनेक बांध बने; राउरकेला, दुर्गापुर और भिलाई में इस्पात कारखाने लगे; बंगलौर टेलीफोन उद्योग, पेरम्बूर में रेल-डिब्बा कारखाना, चितरंजन मे रेल इंजन कारखाना तथा अनेक जगह खाद कारखाने, पिम्परी में पेनिसिलीन कारखाना तथा अनेक प्रकार के छोटे-बड़े कारखाने लगे। उनके प्रयत्न से छोटे उद्योग पनपे; दूर-दूर दुर्गम स्थानों तक सड़कें बनीं; तार और टेलीफोन लगे; किसानों की भलाई के लिए सहकारी समितियां खुलीं।

देश आगे बढ़े, देश उन्नति करे—यही नेहरू जी की अदम्य कामना थी।

मध्य प्रदेश की बात है। एक बार कुछ लोग उनसे मिलने आए। उनमें एक पटवारी भी थे।

नेहरू जी ने उनसे पूछा, "कहिए, आप क्या करते हैं?"

"जी, मैं तो बहुत छोटा आदमी हूं—पटवारी हूं।" उसने

उत्तर दिया।

"अरे वाह!" नेहरू जी ने प्रसन्न होकर हाथ मिलाते हुए कहा, "पटवारी तो बहुत बड़ा आदमी होता है।"

नेहरू जी का कहना था कि देश के निर्माण में लगा प्रत्येक व्यक्ति बड़ा आदमी है—चाहे वह पटवारी हो या डिप्टी, अफसर हो या क्लर्क, मालिक हो या मजदूर। केवल शर्त यह है कि वह देश की उन्नति में लगा रहे।

'आराम हराम है!' नेहरूजी ने एक बार कहा और बार-बार कहा। वे स्वयं २०-२० घण्टे काम करते थे। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय अनेक समस्याएं उनके सामने रहती थीं।

निर्माण-पथ पर बढ़ने वाले को आराम कहां?

किसी व्यक्ति ने उनसे पूछा, "हमारी कौन-कौन-सी प्रमुख समस्याएं हैं?"

"हमारी चालीस करोड़ समस्याए हैं, अर्थात् जितने देशवासी उतनी ही समस्याएं," नेहरू जी ने उत्तर दिया, "हमें हरेक की समस्या का ध्यान रखना है। जब हम हरेक की समस्या का ध्यान रखकर चलेंगे, तभी अपने देश का भला कर सकेंगे और हरेक व्यक्ति खुशहाल होगा; लेकिन यह जरूरी है कि हरेक व्यक्ति अपने हाथ से काम करे, उत्पादन बढ़ाने का प्रयत्न करे और दूसरों पर निर्भर न रहे।"

१०
लौह कपाट खुले

'प्रधानमंत्री जवाहलाल नेहरू जून १९५५ के प्रथम सप्ताह

गोवियत रूस की राजकीय यात्रा करेंगे।' यह समाचार अखबा मे छपा, तो सारी दुनिया में तहलका मच गया।

यह माना जाता था कि रूस परदे के पीछे है; वह लोहे दरवाजों के अन्दर बन्द है। न वहां कोई जा सकता है और वहां से कोई आ सकता है। रूस के नेता किसी भी अन्य देश नेता को अपने यहां बुलाना पसन्द नहीं करते और न किसी दे में जाना चाहते हैं। इसीलिए जब रूस-सरकार ने नेहरू जी क रूस आने का निमंत्रण दिया और नेहरू जी ने उसे स्वीकार क लिया, तो दुनिया-भर में तहलका मच गया।

'नेहरू रूस जाएंगे' सब की जबान पर यही शब्द थे औ सभी गम्भीरता से सोचते कि क्या रूस में नेहरू जी का उचि आदर-मान हो सकेगा? क्या रूस वाले नेहरू जी की शान्ति की आवाज सुनेंगे?

सोवियत रूस के लिए भी ७ जून, १९५५ का दिन एक ऐतिहासिक दिन था। एशिया के नवोदित राष्ट्र भारत का प्रथम प्रधानमंत्री विश्वशान्ति का सदेश देने वहां पहुंच रहा था। सारा मास्को दुल्हन की तरह सजा दिया गया। जगह-जगह द्वार बनाए गए, तोरण और पताकाएं लगाई गईं। बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा गया,—"भारत के प्रधानमंत्री नेहरू का अभिवादन, स्वागतम्!"

नेहरू जी अपनी पुत्री इन्दिरा और अन्य साथियों के साथ मास्को हवाई अड्डे पर पहुंचे। उनके स्वागत में चारों ओर भारत और रूस के राष्ट्रीय झण्डे कंधे से कंधा मिलकर लहरा रहे थे।

उस समय रूस के प्रधानमंत्री श्री बुलगानिन थे। उनके साथ सैकड़ों मंत्री, उच्चाधिकारी, राजदूत, गण्यमान्य व्यक्ति और पत्रकार पण्डित नेहरू का स्वागत करने हवाई अड्डे पर खड़े थे। नेहरू जी ने सबसे हाथ मिलाया। मास्को के बालकों

ने उन्हें गुलदस्ते भेंट किए। बच्चों को देख नेहरू जी गद्गद हो उठे। उन्होंने बच्चों को भरे कण्ठ से धन्यवाद दिया। भारत और रूस के राष्ट्रीय गानों के तराने गूज उठे। रूसी सेना ने नेहरु जी को सलामी दी।

जनता के अदम्य उत्साह, बच्चों के हंसमुख चेहरे और नेताओं द्वारा हार्दिक स्वागत को देखकर नेहरू जी अपनी यात्रा की थकान भूल गए।

सामने माइक लगा था। समस्त उपस्थित-गण उनकी आवाज सुनने को उत्सुक थे। नेहरू जी धीरे-धीरे माइक के सामने गए और पहली बार अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दी में बोले—

"यहां सोवियत संघ में आने की मेरी इच्छा बहुत पहले से रही है। इस प्रसिद्ध और ऐतिहासिक नगर में मैं बहुत पहले आना चाहता था। मेरी इच्छा आज पूरी हुई है। यहां आकर मुझे बहुत खुशी हुई है। मैं अपने को एक यात्री समझता हूं और आपकी सरकार तथा जनता के लिए महान् शुभेच्छाएं लिए हुए एक यात्री के रूप में ही यहां आया हू। मैं आपके विषय में और भी अच्छी तरह तथा और अधिक जानकारी प्राप्त करने यहां आया हूं; और मेरा पूर्ण विश्वास है कि मेरे आने से हमारे सम्बन्ध और भी दृढ होंगे। इस हार्दिक एवं मैत्रीपूर्ण स्वागत के लिए मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हू।"

करतल-ध्वनि और जय-जयकार से सारा हवाई अड्डा गूज उठा।

फिर नेहरू जी तथा श्री बुलगानिन कार में बैठकर लेनिन-ग्राड मार्ग से उस स्थान को गए, जहां नेहरू जी के रहने का प्रबन्ध था। इस लम्बे मार्ग पर दोनों ओर रूसी जनता नेहरू जी के दर्शन करने खड़ी थी। सभी हाथ हिला-हिलाकर तथा स्वागत का नारा लगाकर अपना हर्ष प्रकट कर रहे थे और

नेहरू जी मुस्कराते हुए सबके अभिवादन का उत्तर देते जा रहे थे।

पहले ही दिन नेहरू जी ने रूस की जनता का मन मोह लिया था और रूस की जनता ने नेहरू जी का।

नेहरू जी के स्वागत में रूस के सभी पत्र-पत्रिकाओं ने लेख प्रकाशित किए थे और शुभकामनाएं प्रकट की थीं। 'प्रावदा' ने लिखा था—"भारतीय गणराज्य के प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू आज हमारे देश मे पधार रहे है। सोवियत संघ की जनता अपने मित्र भारत के इस सुपुत्र का स्वागत करती है...।"

और भारत के ये सुपुत्र जवाहर जहां-जहां गए, जनता ने खुले दिल से उनका स्वागत किया। जगह-जगह 'भारत और रूस की मित्रता—जिन्दाबाद' के नारे लगते रहे।

नेहरू जी के साथ कुछ भारतीय पत्रकार भी थे। एक पत्रकार ने रूसी जनता के इस उत्साह को देखकर एक मजदूरिन से पूछा, "तुम नेहरू जी को देखकर इतना हर्ष क्यों प्रकट कर रही हो?"

"क्योंकि नेहरू जी शान्ति के समर्थक हैं और रूसी जनता भी शान्ति चाहती है। इसीलिए उसे भारत से अत्यन्त प्रेम है।" उस मजदूरिन ने उत्तर दिया।

नेहरू जी आलूप्ता गए। वहां से वे और उनके साथी एक छोटे-से जहाज 'अगारा' में क्रीमिया' के किनारे-किनारे चले। 'आर्तेक' तरुण पायनियरों की नाव उस जहाज के निकट पहुंची और नाव में बैठे सब बच्चे एक साथ चिल्ला उठे—"प्रधानमंत्री नेहरू, आर्तेक में हम आपका हार्दिक स्वागत करते हैं!"

जहाज किनारे लगा। एक हजार से भी अधिक बच्चे लाइन में खड़े एक स्वर में बोले—"श्री नेहरू का अभिवादन है! प्यारे मेहमानों का स्वागत—"

तरुण पायनियरों ने मार्चिंग की धुन बजाई। सबसे छोटी लड़की ने नेहरू जी को पायनियर की लाल टाई भेंट की। नेहरू जी ने उन्हें चन्दन की छड़ी दी। फूलों के तोरणों के बीच हसते-गाते बच्चों को देख नेहरू जी का चेहरा खिल उठा।

एक लड़की ने पूछा, "क्या यह स्थान आपको पसन्द है ?"

नेहरू जी ने मुस्कराकर उत्तर दिया, "मुझे रूसी जनता और खासकर रूसी बच्चे बहुत पसन्द हैं।"

बच्चों के बीच भाषण देते हुए नेहरू ने कहा, "मैं यह मिलन कभी नहीं भूलूंगा और आपका अभिवादन भारत के बच्चों तक पहुंचा दूंगा। मैं आशा करता हूं कि जब आप और भारत के बच्चे बड़े हो जाएंगे, तब आप लोग एक-दूसरे के साथ सहयोग करेंगे।"

नेहरू जी अपनी पुत्री इन्दिरा और अन्य सहयोगियों के साथ मध्य एशिया में अश्काबाद, ताशकन्द, समरकन्द, आलम अता, रुबजोवस्क आदि अनेक स्थान देखने गए। जहां-जहां वे गए, जनता ने खुले दिल से उनका स्वागत किया। उनके लिए रूस न तो पर्दे के पीछे रहा और न लोहे के दरवाजों के अन्दर बन्द।

लौटते हुए नेहरू जी ने अपने उद्गार प्रकट किए—"हम इस महान् देश की जनता के प्रति भारतीय जनता के अभिवादन एवं शुभेच्छाएं प्रकट करने आए थे। अब हम अपने देश और अपनी जनता के प्रति आपके प्रेम और सद्भावों से लदे हुए पर वापस जा रहे हैं।"

लौटते समय नेहरू जी वारसा, बेलग्रेड, लन्दन और काहिरा के रास्ते शान्ति का सन्देश देते, पंचशील का महत्व बताते तथा भारत के भाल को उज्ज्वल करते हुए लौटे।

सारा भारत आंखें बिछाए उनके स्वागत को खड़ा था।

उन्होंने विदेशों में भारत के सम्मान को जितना ऊंचा किया और *अनेक देशों से जिस तरह मित्रता स्थापित की, उससे समस्त* भारत उनका कृतज्ञ था। भारत उनका था और वे भारत के रत्न थे।

इसीलिए जब नेहरू जी भारत वापस पहुंचे, तो उस समय के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने सबसे पहले जो काम किया वह था नेहरू जी को 'भारत-रत्न' का अलंकार प्रदान करना।

फिर भारत के निमंत्रण पर सोवियत रूस के प्रधानमन्त्री मार्शल बुलगानिन तथा उनके सहयोगी श्री ख्रुश्चोव आदि १८ नवम्बर, १९५५ को भारत आए।

नई दिल्ली के पालम हवाई अड्डे से राष्ट्रपति-भवन तक लाखों व्यक्तियों ने सड़कों को रंग-बिरंगे फूल-पत्तों और कागजों से सजाकर, 'हिन्दी-रूसी भाई-भाई' के नारे लगाकर तथा उन पर फूलों की वर्षा करके उनका स्वागत किया।

वे आगरा, जयपुर, बंगलौर, कलकत्ता आदि अनेक शहरों में गए और सब जगह उनका जो स्वागत हुआ, उससे सिद्ध हो गया कि भारत उनसे मित्रता बढ़ाने का कितना इच्छुक है।

उस समय श्री ख्रुश्चोव ही मार्शल बुलगानिन के प्रमुख सहायक थे। वे कुछ गर्वीले और उत्साही प्रकृति के थे।

भारत-यात्रा के दौरान एक दिन उन्होंने बड़े गर्व से नेहरू जी को बताया कि "रूसी वैज्ञानिकों ने एक ऐसा अस्त्र तैयार कर लिया है, जो एक साथ लाखों का विनाश कर सकता है।"

नेहरू जी शान्ति से उनकी गर्वोक्ति सुनते रहे। फिर उसी तरह गम्भीर रहकर, बिना उत्तेजित हुए शालीनता से बोले, "आप जानते हैं; मिस्टर ख्रुश्चोव, कि लगभग २००० वर्ष पूर्व एक महान योद्धा ने इस भारत पर शासन किया था। उसका

नाम सम्राट अशोक था। उसने अनेक युद्ध लड़े और अपने राज्य को बढ़ाया। उसके सेनापति हर युद्ध में विजयी होते और आकर बताते कि युद्ध में हजारों मारे गए हैं और अनेक बन्दी बना लिए गए हैं। अशोक आखिर इन हत्याकाण्डों से ऊब गया और उसका झुकाव बौद्ध धर्म की ओर होने लगा। एक दिन जब सेनापति ने उसे बताया कि इस युद्ध में भीषण रक्तपात हुआ है, लाखों मारे गए और शत्रु का समस्त राज्य नष्ट-भ्रष्ट हो गया है, तो अशोक यह सब न सह सका। वह अपनी गद्दी से उठ खड़ा हुआ, उसने अपनी म्यान से तलवार निकाली और उसके दो टुकड़े कर डाले। फिर वह गरज कर बोला, "बस, बहुत हिंसा और रक्तपात हो चुका। अब आगे नहीं होगा। समस्त देश में शान्ति का साम्राज्य रहेगा।"

ख्रुश्चोव चुपचाप नेहरू जी का कथन सुनते रहे। कुछ न बोले। नेहरू जी ने उन्हें भारत के इतिहास की एक ऐसी घटना सुना दी थी, जो आज के युग में भी अनुकरण के योग्य थी।

ख्रुश्चोव उसी दिन समझ गए कि नेहरू जी कितने शालीन हैं और साथ ही अपने शान्ति के अभियान में कितने दृढ़ हैं।

रूसी नेता जब भारत की यात्रा कर वापस लौटे, तो वे पंचशील के सबसे बड़े समर्थक बन चुके थे। उनके दिल में नेहरू जी के प्रति श्रद्धा थी, भारतवासियों के प्रति प्यार और भारत के प्रति सम्मान।

११

युद्ध की लपटें और शान्ति का कारवां

इधर नेहरू जी शान्ति का संदेश देने दुनिया के लगभग सभी

देशों की यात्रा कर रहे थे, और उधर स्वार्थ-लोलुप देशों के युद्ध उन्माद के कारण अनेक देशों में युद्ध की लपटें उठ रही थीं।

दुनिया में दो शक्तिशाली देश अमरीका और रूस हैं। एक पूंजीवाद देश है और दूसरा साम्यवादी। दोनों ही एक-दूसरे के कट्टर शत्रु रहे। उनके प्रभाव से पूरी दुनिया दो गुटों में बंटती जा रही थी। नेहरू जी जानते थे कि इन दो गुटों में कभी भी तनातनी हो सकती है—और तब ? तब अणु-शस्त्रों से सारी दुनिया तबाह हो जाएगी। अतः वे दोनों देशों में मेल कराने का भरसक प्रयत्न करने लगे।

इण्डोनेशिया और कोरिया के प्रश्न पर युद्ध की जो लपटें उठी थीं, उन्हें नेहरू जी ने शान्त किया था। फिर इण्डोचीन का प्रश्न उठ खड़ा हुआ। नेहरू जी ने अपनी बुलन्द आवाज से वहां की लपटों पर शान्ति का जल छिड़का।

उन्हीं के प्रयत्न से तीन बड़े देशों का पहला शिखर-सम्मेलन हुआ।

मिस्र में स्वेज नहर है, जो भूमध्यसागर तक जाती है। इस पर पहले ब्रिटेन का अधिकार था। १९५६ में मिस्र के राष्ट्रपति नासिर ने उसका राष्ट्रीयकरण कर दिया। इससे ब्रिटेन, फ्रांस और इजराइल क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने मिस्र पर हमला करने के लिए अपनी फौजें भेज दीं। एक बार फिर विश्वयुद्ध छिड़ने की आशंका हो गई।

इसी बीच रूस और हंगरी में मतभेद हो गया और रूस ने अपनी फौजें हंगरी पर आक्रमण करने के लिए भेज दीं। डर था कि यदि कोई भी पश्चिमी देश हंगरी की मदद करेगा तो विश्व-युद्ध छिड़ जाएगा।

दो-दो जगह विश्वयुद्ध का भय और बीच में शान्ति के दूत नेहरू। समस्त शान्तिप्रिय राष्ट्र नेहरू जी की ओर देखने लगे।

नेहरू जी बहुत चिन्तित थे। क्या होगा इस दुनिया का? किस तरह बुझेगी यह युद्ध की ज्वाला? उन्होंने लोकसभा में बड़े दुखी स्वर में कहा—"हम मिस्र में होने वाली घटनाओं से बड़ा दुखी हैं। इतने ही दुखी हम हंगरी में होने वाली घटनाओं से हैं। दुनिया-भर में यदि कहीं भी स्वाधीनता पर हमला होता है, तो हमारा दुखी होना स्वाभाविक है।"

फिर समस्त शान्तिप्रिय देश नेहरू के साथ हो गए। ब्रिटेन, फ्रांस, इज़रायल और रूस का आगे बढ़ना बन्द हो गया। युद्ध एक बार फिर टल गया।

लेकिन इस तरह कब तक युद्ध की लपटें उठेंगी और उन्हें शान्त किया जायेगा? नेहरू जी ने पहले ही घोषणा कर दी थी कि वे गुटों से अलग रहेंगे, किसी भी सैनिक-संधि में भाग नहीं लेंगे और युद्ध में किसी का भी पक्ष नहीं लेंगे। अनेक छोटे-छोटे देश इसी प्रकार गुटों से अलग रहना चाहते थे, लेकिन इन शक्तिशाली देशों से डरते थे। नेहरू जी के नेतृत्व में वे सब देश गुटों से अलग हो गए।

गुटों से अलग रहने वाले इन देशों को मिलाकर नेहरू जी ने 'शान्ति-क्षेत्र' बनाया। ऐसा क्षेत्र जहां युद्ध न हो, जहां समस्त देश पंचशील का पालन करें और शान्ति तथा सह-अस्तित्व से रहें। नेहरू जी का विचार था कि इस 'शान्ति-क्षेत्र' को धीरे-धीरे समस्त दुनिया में फैला दिया जाए। इसके लिए नेहरू जी ने अनेक देशों की शान्ति-यात्राएं कीं।

नेहरू जी का भरसक प्रयत्न था कि रूस और अमेरिका में मित्रता हो जाए और वे आपस में लड़ना तथा दुनिया में युद्ध का भय पैदा करना छोड़ दें। इसीलिए १९६१ में रूस ने जब अणुबम परीक्षण किया तो नेहरू जी सीधे रूस पहुंचे और वहां प्रधानमन्त्री श्री ख्रुश्चोव से मिले। ख्रुश्चोव से उनकी जो बातें

हुई, उसी के परिणामस्वरूप रूस ने फिर दुबारा अणुबम-परीक्षण नहीं किया।

उधर अमेरिका भयभीत हो गया था। उसने अणुबमों से बचने के लिए 'रक्षा-स्थल' बनाने शुरू कर दिए थे। नेहरू जी यह सुनकर बहुत दुखी हुए।

अमेरिका में केनेडी नए-नए राष्ट्रपति बने थे। वे नेहरू जी के बहुत भक्त थे। उन्होंने अमेरिका की सीनेट में राष्ट्रपति-पद से २९ जनवरी, १९६१ को पहली बार राष्ट्र के नाम सन्देश दिया था, और उसमें कहा था—"यहीं इसी सदन में १४ वर्षों तक लगातार बैठकर मैंने दोनों सदनों के सदस्यों से प्रेरणा प्राप्त की है। मैं नेहरू के आदर्शवाद से बहुत प्रभावित हुआ हूँ...।"

अमेरिका में नेहरू जी का धूमधाम से स्वागत हुआ। अब वे उन विश्व-नेताओं में से थे, जिन्हें देखने के लिए और जिनका एक-एक शब्द सुनने के लिए लाखों की भीड़ टूट पड़ती है।

हवाई अड्डे पर ही एक पत्रकार ने नेहरू जी से पूछा, "भारत जैसे तटस्थ देश विश्व-शान्ति के लिए क्या योगदान कर सकते हैं?"

"शान्ति और सहयोग के वातावरण का प्रसार।" नेहरू जी ने उत्तर दिया।

अमेरिका में राष्ट्रपति केनेडी और उनमें घण्टों बातें हुईं।

तीसरी बार ८ नवम्बर १९६१ को जब केनेडी ९० मिनट तक बात करने के बाद उन्हें कार तक छोड़ने बाहर आए तो फोटोग्राफरों और पत्रकारों ने दोनों को घेर लिया।

पत्रकारों ने पूछा, "आप लोगों की बातचीत कैसी रही?"

"हम लोगों की बातचीत बहुत बढ़िया रही।" केनेडी ने उत्तर दिया।

नेहरू जी ने भी कहा, "हमारी बातचीत बड़ी सुन्दर रही।"
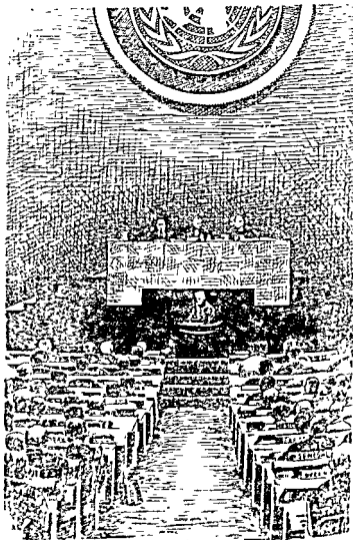
राष्ट्रपति केनेडी ने अपने उद्‌गार प्रकट किए—"विश्व में नेहरू जी जैसा व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का हामी और कोई नहीं है।"'नेहरू जी का मैं आदर करता हूं। वार्ता के बाद उनके प्रति मेरी श्रद्धा और बढ़ गई है।"

१० नवम्बर, १९६१ को नेहरू जी जब संयुक्त राष्ट्रसंघ की महासभा में भाषण देने गए, तब वहां तिल रखने को जगह नहीं थी। दुनिया की उस प्रमुख प्रतिनिधि संस्था में नेहरू जी ने शान्ति का सन्देश देते हुए कहा—"आधुनिक युग में जब खतरनाक-से-खतरनाक अणुबम तैयार हो चुके हैं, तब संसार के सामने निरस्त्रीकरण के अलावा और कोई मार्ग नहीं है।''' दुनिया में ऐसा कोई देश नहीं है, जो युद्ध चाहता हो। रूस और अमेरिका जैसे बड़े-बड़े देश, जो तरह-तरह के अणु-शस्त्रों से लैस हैं, वे भी युद्ध नहीं चाहते। तो फिर क्या बात है कि युद्ध की सम्भावना को रोकने में हम सफल नहीं हो सके हैं?"

शान्ति के दूत का यह प्रश्न ऐसा था, जिसका उत्तर कोई नहीं दे रहा था। उन्होंने फिर रूस के अणु-परीक्षण, अमेरिका के रक्षा-स्थल और दुनिया में फैलने वाले भय का जिक्र करते हुए बड़े दुखी स्वर में कहा—"यह बड़े दुख की बात है कि हम इस भय को समाप्त कर देने के बजाय, चूहों की तरह जमीन के नीचे दुबकने और रहने की सोचते हैं।"

दुनिया के बड़े-बड़े नेताओं के बीच यह विश्व-नेता बिना झिझके, बिना किसी भय के सभी युद्ध-लोलुपों को झिड़किया दे रहा था और सब शान्त होकर सुन रहे थे।

नेहरू जी ने स्पष्ट घोषणा की—"हमारे सामने दो ही रास्ते हैं—एक तो शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व से रहना और दूसरा अपना अस्तित्व मिटा देना।"

कितना सच कहा था उस विश्वनेता ने ! इस दुनिया में अब केवल मिलकर ही रहा जा सकता है। यदि मिलकर नहीं रह सकते तो युद्ध होगा ही और युद्ध हुआ तो समस्त मानव-जाति इस धरती से उठ जाएगी।

नेहरू जी की इसी घोषणा के फलस्वरूप अणु-परीक्षण के रोकने के लिए बड़े-बड़े देशों ने सन्धियां कीं।

फिर नेहरू जी के प्रयत्न से ही अमेरिका के राष्ट्रपति और रूस के प्रधानमन्त्री में सीधी वार्त्ता के लिए वाशिंगटन से मास्को तक 'हाट लाइन' बिछाई गई। इस 'हाट लाइन' से वे बिना किसी रुकावट के सीधे बात कर सकते थे और तुरन्त निर्णय ले सकते थे।

यह जवाहरलाल ही थे, जिनके जौहर से यह सब हुआ। भारत आगे बढ़ता गया और दुनिया युद्ध की लपटों से बचती गई।

जो नेहरू अब तक हर बार शान्ति-स्थापना की वकालत करते थे, वे धीरे-धीरे अनेक देशों के मतभेद कम करने के लिए निर्णायक बन गए थे। बड़े-बड़े देशों के नेता कोई भी बड़ा कदम उठाने से पहले सोचने लगे थे कि, 'इसका नेहरू पर क्या प्रभाव पड़ेगा ?' 'नेहरू इस बारे में क्या कहेंगे ?' 'नेहरू पर इसकी क्या प्रतिक्रिया होगी ?'

१२
अभी चलना है मीलों दूर····

जीवन ७१ से भी अधिक वसन्त देख चुका था और ७१ से भी अधिक पतझड़। लेकिन अनन्त पथ का यह पथिक चला ही

जा रहा था, तेज कदमों से। कहीं थकान नहीं, आराम नहीं, क्षण-भर को भी फ़ुरसत नहीं।

सारा देश, नहीं, सारा संसार उसकी ओर ताक रहा था—उसके मार्गदर्शन के लिए, उसके शान्ति के संदेश के लिए, उसके प्यार के लिए, उसके आदेश के लिए। और वह अपना एक-एक क्षण इस संसार के लिए होम रहा था। नीलकण्ठ भगवान शिव की तरह समस्त संसार का गरल उसने अपने कण्ठ में धारण कर लिया था और संसार को अमृत लुटाता हुआ मुस्करा रहा था। कितनी स्नेहिल थी वे आंखें, और कितनी निश्चल थी वह मुस्कान!

भारत की राजधानी दिल्ली और दिल्ली का वह क्षेत्र तीन मूर्ति। इसी तीन मूर्ति में प्रधानमन्त्री-भवन।

भोर हो गई है। लॉन में नन्ही-नन्ही ओस-भीगी दूब चमक रही है; पेड़ों की पत्तियों में कम्पन आ गया है और चिड़िया चहचहा रही हैं। सूर्य भगवान की गुलाबी किरणें उस विशाल भवन के ऊपर की मंजिल में खिड़कियों से छनकर कमरे के अन्दर तक पहुंच गई है। समस्त वातावरण में हल्का-हल्का मीठा-मीठा शाश्वत नाद गूंज रहा है—"मैं अस्तित्ववान हूं।"

उस शाश्वत नाद से और प्रभात के आलोक के मधुर सस्पर्श से जवाहरलाल जाग गए हैं। मानो शाश्वता-विधाता की इस माया को देखने के लिए विस्मय से उनकी आंखें खुल गई हों। वे तुरन्त बिस्तर से उठ जाते हैं।

यह नए दिन का आरम्भ है। कल जहां तक बढ़े थे, आज उससे आगे बढ़ना है। वे एक बार कमरे के चारों ओर देखते हैं। सामने महात्मा गांधी का चित्र टंगा है, मेज पर भगवद्गीता रखी है और उसकी बगल में भगवान बुद्ध की करुणा-मूर्ति। महात्मा

कितना सच कहा था उस विश्वनेता ने ! इस दुनिया में अब केवल मिलकर ही रहा जा सकता है। यदि मिलकर नहीं रह सकते तो युद्ध होगा ही और युद्ध हुआ तो समस्त मानव-जाति इस धरती से उठ जाएगी।

नेहरू जी की इसी घोषणा के फलस्वरूप अणु-परीक्षण के रोकने के लिए बड़े-बड़े देशों ने सन्धियां कीं।

फिर नेहरू जी के प्रयत्न से ही अमेरिका के राष्ट्रपति और रूस के प्रधानमन्त्री में सीधी वार्ता के लिए वाशिंगटन से मास्को तक 'हाट लाइन' बिछाई गई। इस 'हाट लाइन' से वे बिना किसी रुकावट के सीधे बात कर सकते थे और तुरन्त निर्णय ले सकते थे।

यह जवाहरलाल ही थे, जिनके जौहर से यह सब हुआ। भारत आगे बढ़ता गया और दुनिया युद्ध की लपटों से बचती गई।

जो नेहरू अब तक हर बार शान्ति-स्थापना की वकालत करते थे, वे धीरे-धीरे अनेक देशों के मतभेद कम करने के लिए निर्णायक बन गए थे। बड़े-बड़े देशों के नेता कोई भी बड़ा कदम उठाने से पहले सोचने लगे थे कि, 'इसका नेहरू पर क्या प्रभाव पड़ेगा ?' 'नेहरू इस बारे में क्या कहेंगे ?' 'नेहरू पर इसकी क्या प्रतिक्रिया होगी ?'

१२
अभी चलना है मीलों दूर....

जीवन ७१ से भी अधिक वसन्त देख चुका था और ७१ से भी अधिक पतझड़। लेकिन अनन्त पथ का यह पथिक चला ही

और कुछ आवश्यक निर्देश। वे सब टाइप होकर मेज पर रख दिए गए हैं।

रूस के राष्ट्रपति को निमंत्रित करने के बारे में एक टिप्पणी है। ईरान के शाह के जन्मदिवस पर शुभकामना-संदेश है; सूडान के राष्ट्रीय दिवस पर बधाई-संदेश है; मिस्र के राष्ट्रपति नासिर ने जो व्यक्तिगत पत्र भेजा था, उसका उत्तर है; भारत-चीन सीमा-विवाद धीरे-धीरे बढ़ता ही जा रहा है। चीनी विमानों ने भारतीय सीमा का अनेक बार उल्लंघन किया है। इस बारे में चीन सरकार को विरोधपत्र भेजा जा रहा है। योजना-आयोग के लिए कुछ आवश्यक निर्देश है। कुछ संसदसदस्यों ने अपने इलाके की समस्याएं लिख भेजी थीं, उनका उत्तर है।

एलकाइन्त पार्क (अमेरिका) की श्रीमती एच० व्रिकलिन ने पत्र के साथ एक डॉलर का चैक भेजा है। पत्र में लिखा है—'प्रिय प्रधानमन्त्री जी, इस धन से उस व्यक्ति के लिए रोटी खरीदी जाए, जिसे भूखा मरने से रोका जासकता है।' १०वर्षकी लड़की और ८ वर्ष के लड़के की यह मां श्रीमती व्रिकलिन हरसप्ताह एक डॉलर का चैक भेज देती है। प्रधानमन्त्री और भारतीय जनता के प्रति उसके भावपूर्ण प्रेम और सहानुभूति से जवाहरलाल भावविभोर हो जाते हैं। उसे भी उत्तर दिया जा रहा है।

गढ़वाल जिले के नौगांव के छात्र रेवाधर को ६०० रु० भेजने का आदेश है। यह बालक आठवीं कक्षा तक छात्रवृत्ति के बल पर पढ़ता रहा और फिर पढ़ाई यकायक रुक गई। गरीबी के कारण उसे दिल्ली आकर घरेलू नौकरी करनी पड़ी थी। इसी बीच वह नेहरू जी से मिला था और उन्हें अपनी दुख-गाथा सुनाई थी। नेहरू जी का कोमल हृदय पिघला और अब उस बालक को आगे पढ़ने के लिए ६०० रु० का बैंक ड्राफ्ट भेजा जा रहा है। अन्य अनेक बच्चों के पत्र हैं—अपने 'चाचा नेहरू' के नाम।

गांधी ने उन्हें रास्ता दिखाया ; भगवद्गीता ने कर्मयोग का संदेश दिया और भगवान बुद्ध ने करुणा का। जवाहरलाल उनकी ओर देखकर फिर बाहर देखने लगते हैं, खिड़की से बाहर। दूर, बहुत दूर तक उनकी दृष्टि चली जाती है, अन्तरिक्ष में भी बहुत दूर। क्षण-भर के लिए एक कल्पना, एक स्वप्न उनके मायावी लोचनों में आकर ओझल हो जाता है।

दैनिक कार्यों से निबटकर वे शीर्षासन करते हैं और स्नानघर की ओर बढ़ते हैं, तो एक पुरानी बात याद आ जाती है। वे मुस्कराते हैं और जल्दी से स्नानघर में घुस जाते हैं।

काफी पुरानी बात है। तब महात्मा गांधी जीवित थे। एक दिन नेहरू जी उनके निकट बैठे थे। गांधी जी को विनोद सूझा।

उन्होंने पूछा, "सुना है, आजकल तुम सिर के बल चलते हो?"

"सिर के बल नहीं चलता," नेहरू जी ने तत्काल उत्तर दिया, "शीर्षासन करता हूं। इससे दिमाग की ताकत बढ़ती है।"

"लेकिन तुम्हारा दिमाग तो बढ़ा नहीं मालूम होता?" बापू ने विनोद किया।

"ठीक है, अब बकरी का दूध पिया करूंगा," नेहरू जी ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

बापू खिलखिलाकर हंस पड़े। उनकी आंखों में वात्सल्य छलक आया था। नेहरू जी को उनसे पिता जैसा नहीं, बल्कि मां जैसा प्यार मिला था। हाय ! बापू, कहां चले गए तुम अब ? किससे मिलेगा मुझे इतना प्यार !

स्नानघर से लौटते हैं तो मन कुछ भारी-सा हो जाता है—बापू की याद के कारण।

वे जल्दी-जल्दी अपने कार्यालय के कमरे में पहुंच जाते हैं। कल रात काफी देर तक उन्होंने कुछ पत्र लिखाए थे, कुछ संदेश

सबका उत्तर लिख दिया गया है।

जवाहरलाल हरेक कागज को गौर से पढ़ रहे हैं; उनमें कुछ सुधार करते हैं, विराम-अर्धविराम लगाते हैं और हस्ताक्षर कर देते हैं।

डेढ़ घण्टा बीत गया है। साढ़े सात बज गए हैं। जवाहरलाल उठकर अपने कमरे में चले जाते हैं। चूड़ीदार पाजामा और चुस्त शेरवानी पहनते हैं। हीरालाल माली लाल गुलाब की कली रख गया है। उसे अपने बटन-होल में लगाते हैं और खिले गुलाब की तरह सीढ़ियां उतरकर नीचे बैठक के कमरे में चले जाते हैं।

अनेक लोग मिलने आए हुए हैं, कुछ अकेले और कुछ झुण्डों में। विदेशी सैलानी, किसानों की टोली, गांव के छोटे-से स्कूल के कुछ छात्र अपने अध्यापक के साथ, बीमार व्यक्ति, सताई हुई औरतें, भ्रष्ट अधिकारियों की शिकायत करने वाले कुछ व्यक्ति, अपने हाथ से बुना पशमीना भेंट करने के लिए आया हुआ वृद्ध कश्मीरी, अपनी संस्था के लिए सहायता मांगने वाले कुछ कार्यकर्ता, हर प्रकार के लोग मिलने आए हैं और जवाहरलाल सबसे मिल रहे हैं, सबकी सुन रहे हैं। वे सबके मसीहा हैं, सबका दुख दूर करने को तत्पर हैं, सबसे घुल-मिलना चाहते हैं।

नाश्ते का समय हो गया है। जवाहरलाल खाने के कमरे की ओर बढ़ रहे हैं। इन्दिरा जी एक संसद-सदस्या के साथ पहले ही से बैठी हैं। बाहर किसानों की टोली गद्गद स्वर में 'नेहरू जी जिन्दाबाद' के नारे लगाते हुए बाहर जा रही है। वे बहुत खुश हैं। आज देश के कर्णधार उनसे गले मिले। नेहरू जी मुस्कराते हुए नाश्ते के कमरे में पैर रखते हैं। इन्दिरा जी और संसद-सदस्या [illegible] हैं। जवाहरलाल जी एक कुर्सी खींचकर बैठ जाते हैं।

पीठ सहलाते हैं और फिर उसे उतारकर बच्चों के बीच ले आते हैं। बच्चे कौतुक से उस अनोखे जानवर को देख रहे हैं।

"अच्छा बताओ, यह कौन जानवर है?" जवाहरलाल पूछते हैं।"

"यह भालू है।" एक बच्चा उत्तर देता है।

"वाह, खूब पहचाना!" जवाहरलाल हंसते हैं, "अरे, कहीं भालू ऐसा होता है?"

वह बच्चा खिसिया जाता है।

दूसरा बच्चा अपना ज्ञान बघारता है, "नहीं, यह उदबिलाव है।"

"उदबिलाव? अरे, उदबिलाव तुमने देखा भी है?" जवाहरलाल फिर हंस पड़ते हैं, "यह न भालू है, न उदबिलाव। यह भालू और उदबिलाव के बीच की किस्म का जानवर है। जब मैं असम गया था, तो वहां मुझे भेंट में मिला था।"

बच्चे हंस पड़ते हैं—निश्चल हंसी, निर्विकार मासूम हंसी। जवाहरलाल भी हसते हैं—बच्चों की तरह।

"चाचा जी, हम आपके साथ तस्वीर खिंचवाएंगे।" एक बच्चा मचलकर कहता है।

"अच्छा, खिंचवा लो!"

फोटो खिंचती है।

"चाचा जी, हमारी आटोग्राफ-बुक में कुछ लिख दीजिए!" एक बच्चा अपनी आटोग्राफ-बुक उनकी ओर बढ़ाता है।

जवाहरलाल उस पर लिख देते हैं।

... सुई आगे बढ़ती जा रही है। साढ़े नौ बज चुके हैं। ...न को जी नहीं चाह रहा है। बच्चे भी उन्हें नहीं ...। लेकिन काल की यह गति?

मेरे लिए बहुत-सा काम पड़ा हुआ है," जवाहरलाल

उन्हें समझाते हैं, "अब मुझे दफ्तर जाना है। जय हिन्द !"

"जय हिन्द !" बच्चे भी चिल्लाते हैं। जवाहरलाल तेजी से अपने कमरे की ओर बढ़ते हैं।

जवाहरलाल की कार चली जा रही है—विदेश-मंत्रालय की ओर। वहां स्वीडन के एक शिष्टमण्डल से मिलना है; विदेशी मुद्रा का अध्ययन करने के लिए आए हुए विश्व-बैंक के प्रतिनिधि से मिलना है, जापान के कुछ कृषि-विशेषज्ञों से मिलना है; रूस के राजदूत भी मिलने आएंगे; अमेरिका के राजदूत अपने राष्ट्रपति का पत्र लेकर आएंगे।

इन सबसे मिलकर जवाहरलाल की कार अब सीधे बढ़ रही है—लोकसभा की ओर। आज ११ बजे उन्हें अनेक प्रश्नों के उत्तर देने हैं।

लोकसभा का प्रश्नोत्तर-काल। प्रधानमंत्री पर प्रश्नों की बौछार हो रही है। चीन ने भारत के जो इलाके हड़प लिए हैं, उन्हें वापस लेने के लिए क्या किया जा रहा है? चीन के विमानों ने कितनी बार भारतीय सीमा का उल्लंघन किया? क्या उन्हें विरोध-पत्र भेजा गया है? यदि नहीं तो क्यों? पाकिस्तान से [illegible] समझौते के बारे क्या निर्णय है? क्या [illegible]

लग गया है। वे एक-एक करके आ रहे हैं। बहुत-से कागज सामने रखे हैं, अनेक रिपोर्टें हैं, अनेक विवरण, अनेक निमंत्रण। जवाहरलाल सबको गौर से देख रहे हैं। सहायक सचिव उनके काम में हाथ बंटा रहे हैं।

डेढ़ बजने वाला है। जवाहरलाल जी को घर पहुंचना है। तीन राज्यों के मुख्य मंत्रियों को दोपहर के खाने पर बुला रखा है। नेहरू जी तेजी से कमरे से बाहर निकलते हैं। लॉबी में ४-५ पत्रकार उन्हें नमस्ते करते हैं। नेहरू जी मुस्कराकर उत्तर देते हैं। ये पत्रकार, जहां देखो वहीं मौजूद। गांधी जी ने कहा था कि, 'अगर मैं नरक में जाऊं, तो भी वहां मुझे पत्रकार अवश्य मिल जाएंगे।'

एक पत्रकार आगे बढ़ आया है। कहता है,"आजकल बनारस विश्वविद्यालय में बड़ी गड़बड़ी चल रही है। उसके बन्द होने तक की नौबत आ गई है।"

"हूं..." नेहरू जी मुस्कराते हैं। पत्रकार कुछ गहरी बात जानना चाहता है, इसीलिए भूमिका बांध रहा है। जाने कौन-सी थाह लेने की इच्छा है।

"क्या सरकार बनारस विश्वविद्यालय को कहीं और ले जाएगी ?" पत्रकार पूछ रहा है।

अच्छा, तो पत्रकार यह जानना चाहता है। शायद लोगों ने कुछ अफवाहें उड़ा दी हैं।

"जी, आप कहें तो बनारस को ही कहीं और ले जाएं !" वे पत्रकार की ओर देखकर कहते हैं।

पत्रकार ठिठक जाता है और नेहरू जी कार के अन्दर घुस जाते हैं। ड्राइवर खटाक से कार का दरवाजा बन्द कर देता है। नेहरू जी खिसियाए पत्रकार को देखकर मुस्कराते हैं। पत्रकार

भी होठों पर वही सदाबहार मुस्कान नाचता है। वह नेहरू जी को पास आते आता था, कैमरा क्लिक कर रहा है।

कार पोर्च में शीत मूर्ति के फाटक के अन्दर घुसकर पोर्च में रुक जाती है। चपरासी कार का दरवाजा खोलता है। नेहरू जी गाड़ी से निकलकर लगातार सीढ़ियां चढ़ते हैं और हाल के कमरे में पहुँच जाते हैं। दोनों मुख्य मन्त्री खड़े होकर अभिवादन करते हैं। नेहरू जी मुस्कराकर हाथ मिलाते हैं।

नाश्ता चल रहा है और उसके साथ बातें भी। नेहरू जी एक-एक से उनके बारे में, उनके परिवार के बारे में, उनके राज्य की स्थिति के बारे में पूछ रहे हैं। मुख्य मन्त्री उत्तर देते जा रहे हैं

मुख्य मन्त्रियों को विदा कर नेहरू जी कुछ देर आराम करने चले जाते हैं। अभी तीन बजे राष्ट्रीय विकास-परिषद् की बैठक है; फिर दिल्ली पब्लिक स्कूल के वार्षिक समारोह में जाना है; फिर राष्ट्रपति-भवन।

नेहरू जी आराम करने लेटते ही हैं कि किसी बच्चे के रोने की आवाज सुनाई देती है। वे खिड़की के पास पहुंचते हैं। नीचे देखते हैं कि कुछ मजदूरिनें लॉन की घास छील रही हैं। दूर पेड़ के नीचे एक बच्चा रो रहा है।

नेहरू जी सीधे नीचे उतरते हैं। गन्दे चिथड़ों में लिपटे उस बच्चे को गोद में उठा लेते हैं। बच्चा चुप हो जाता है। टुकर-टुकर उनकी ओर देखने लगता है। नेहरू जी मुस्कराते हैं; ये निश्छल मासूम आंखें! मजदूरिन दौड़ती हुई आती है। बच्चे को ले लेती है। हाय! उसके कारण आज पण्डित जी आराम भी न कर पाए।

लेकिन नेहरू जी को आराम न करने का कोई मलाल नहीं। ...ड़ों में लिपटे उस मैले-कुचैले गरीब बच्चे की आंखों

में पढ़ा है—प्यार का सन्देश ; उसके कपड़ों में देखी है देश की गरीबी—देश की गरीबी दूर करनी ही होगी। ये गन्दी बस्तियां ! इन्हें नए साफ-सुथरे घरों में बदलना ही होगा। ये मासूम गरीब बच्चे ! ये ही तो देश की दौलत हैं—भावी नागरिक।

पौष्टिक खाना, कपड़ा, और शिक्षा। राष्ट्रीय विकास-परिषद् की बैठक में नेहरू जी का भाषण चल रहा है। यह वह परिषद् है, जो योजना-आयोग की योजनाओं को स्वीकार करती है, उन्हें बनाती है।

चार बजने वाले हैं। नेहरू जी की कार 'दिल्ली पब्लिक स्कूल' की ओर बढ़ रही है। बच्चे कतारों में खड़े हैं। चाचा नेहरू जिन्दाबाद' के नारे लगा रहे हैं।

बच्चों के बीच नेहरू जी फिर बच्चे बन गए हैं। वे सीधे मंच पर न जाकर बीच में ही उतर गए हैं। बच्चों ने उन्हें घेर लिया है। हंसी, खिलखिलाहट और कहकहे। प्रबन्धक परेशान। निजी सचिव बार-बार बताना चाहता है कि ठीक ५ बजे राष्ट्रपति-भवन पहुंचना है।

नेहरू जी जल्दी-जल्दी मंच पर पहुंचते हैं। भाषण होता है और फिर मंच से उतरकर 'जयहिन्द' कहते हुए चल देते हैं। केवल १० मिनट का कार्यक्रम लेकिन स्कूल के बच्चों पर 'चाचा नेहरू' की अमिट छाप।

जवाहरलाल राष्ट्रपति-भवन पहुंच गए हैं। यूगोस्लाविया के नये राजदूत राष्ट्रपति के सामने अपने परिचय-पत्र पेश कर रहे हैं। नेहरू जी गुमसुम बैठे हैं। जाने कितने विचार, कितनी कल्पनाएं दिमाग में चक्कर काट रही हैं।

हल्का चाय-पान। नेहरू जी उसी तरह गम्भीर। थोड़ी-सी बातें नए राजदूत के साथ, फिर वही चुप्पी।

पूछ रहे हैं, "आप पहले भी भारत आए थे। इस बार आपको अधिक पढ़ने-सुनने को मिलती है। हो सकता है, जनता की हालत में जो सुधार हुआ है, वही इसका कारण हो, पर मेरा खयाल है कि अखबारों से आपको जो शिकायत है, उसे आप जनता से मिलकर दूर कर लेते हैं।"

"हां सबसे अधिक आराम मुझे भीड़ के सामने महसूस होता है," नेहरू जी भावों में बह रहे हैं, "मैं जनता का हो जाता हूं जनता मेरी। जनता से मुझे नई ताकत मिलती है। बदले में मैं उसे अपने विचारों में साझीदार बनाने की कोशिश करता हूं। इसे एक किस्म का लेन-देन समझ लीजिए।"

"आप लेखक भी तो हैं! आपके शब्द इतिहास का निर्माण करते हैं।" काजिन्स को पूछने का मौका मिल जाता है।

"उंह!" नेहरू जी हंस पड़ते हैं, "मैंने लेखक बनने के लिए लिखना शुरू नहीं किया था। मुझे तो कुछ विचार पेश करने थे···"

बातें चलती रहती हैं। नेहरू जी गद्दी से सिर टिकाकर आराम से बैठे हैं। काजिन्स का एक और मौका मिलता है।

वे पूछते हैं, "प्रधानमन्त्री जी! भारत को गांधी जी की विरासत बहुत बड़ी है और शायद इतिहास कहेगा कि उनकी सबसे बड़ी विरासत खुद आप हैं। पर भारत को आपकी विरासत कौन है?"

यह महत्वपूर्ण प्रश्न—'नेहरू के बाद कौन?' प्रत्येक व्यक्ति यही सवाल पूछता है। नेहरू जी गहरी सांस लेते हैं।

"भारत को मेरी विरासत कौन है?···अपनी हुकूमत कर सकने वाले चालीस करोड़ भारतीय!" नेहरू जी उत्तर देते हैं "लोग अक्सर पूछते हैं कि मेरा उत्तराधिकारी कौन होगा। शायद लोग चाहते हैं कि मैं किसी को या किन्हीं को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर दूं। पर मैं तो इस दृष्टि से सोचता ही नहीं। मेरा विश्वास थोड़े-से नेताओं के बजाय सारी जनता का

स्वशासन चलाने की शिक्षा देने में है। मुख्य चीज है—मंजिल;और उस मंजिल की ओर चालीस करोड़ लोगों को आगे बढ़ना है।"

नेहरू जी अपने विचारों में डूबते जा रहे हैं। नार्मन काजिन्स एक-एक शब्द गौर से सुनने के लिए कुछ आगे झुक गए हैं। वातावरण गम्भीर हो गया है।

भारतीय लोकतंत्र के जनक नेहरू जी कहते जा रहे हैं, "मैं किसी को अपना उत्तराधिकारी चुन लूं—यह मेरे सारे सोचने के ढर्रे से मेल नहीं खाता। मुझे कोई राजवंश थोड़े ही चलाना है! लोकतन्त्र पर इतना सब लिखने और बोलने के बाद, मैं किसी को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर जाऊं—यह कितनी शोकनाक चीज होगी। मेरी सबसे बड़ी देशसेवा यह होगी कि समय की आवश्यकता के अनुसार नेता पैदा करने में मैं जनता की मदद करूं।"

समय बीतता जा रहा है। अभी बहुत-से काम करने को पड़े हुए हैं। काजिन्स भी इस बात को जानते हैं। नेहरू जी खिड़की से बाहर देखने लगे हैं। काजिन्स उठते हैं। नेहरू जी बड़े प्रेम से हाथ मिलाते हैं; फिर उन्हें छोड़ने दरवाजे तक आते हैं।

निजी सचिव कमरे में आकर बताता है कि प्रतिरक्षा-मन्त्री तीन बार फोन कर चुके है; नेहरू जी सीधे कार्यालय वाले कमरे में पहुंचते हैं। प्रतिरक्षा-मन्त्री से फोन मिलाया जाता है। उधर से वे नागालैण्ड के बारे में, उत्तरी भारत-चीन-सीमा की ताजा स्थिति के बारे में बता रहे हैं। नेहरू जी गम्भीर होकर —न रहे हैं।

तभी न्यूयॉर्क से फोन आता है। संयुक्त राष्ट्र में हमारे स्थायी तनिधि कुछ सलाह चाहते है। नेहरू जी उन्हें समझा रहे हैं। रात के खाने का समय हो गया है, लेकिन विदेशों से फोन

आते जा रहे हैं। तटस्थ राष्ट्रों के सम्मेलन के बारे में लंका की प्रधानमन्त्री श्रीमावो बण्डारनायके पूछ रही हैं। पेरिस-स्थित भारतीय राजदूत फ्रांस के विदेशमन्त्री का आवश्यक संदेश पढ़कर सुना रहे हैं।

रात का खाना चल रहा है। स्वीडन के नए राजदूत सपत्नीक खाने पर आए हुए हैं।

रात्रि देवी के काले पंख फैलते जा रहे हैं। अंधेरा और घना होता जा रहा है। पक्षी अपने घोंसलों में सो चुके हैं। नेहरू जी के तीनों कुत्ते पुतली, पप्पो और मधु ऊंघने लगे हैं। समस्त मानव-जाति सोने की तैयारी कर रही है। और प्रधानमंत्री नेहरू ?

वे गम्भीर विचारों में खोए अपने कार्यालय वाले कमरे की ओर बढ़ रहे हैं। अभी बहुत काम पड़ा हुआ है। निजी सचिव के साथ तीन-चार कर्मचारी बैठे हैं।

मेज पर अनेक रिपोर्टें है, फाइलें है, पत्र हैं, संवाद हैं। नेहरू जी एक-एक को गौर से पढ़ रहे हैं और उत्तर लिखाते जा रहे हैं।

आधी रात बीत चुकी है। नेहरू जी की निगाह घड़ी की सुइयों पर अटक जाती है।

"भई, माफ करना, आज भी देर हो गई। अब जाओ ! सवेरे आकर टाइप कर लेना।" नेहरू जी अपने निजी सचिव से बड़ी आत्मीयता से कह रहे हैं। उनका प्यार सचिव तथा अन्य कर्मचारियों की थकान मिटा देता है। वे चले जाते हैं।

नेहरू जी उठते हैं। खिड़की के बाहर देखते हैं। चारों ओर सुनसान, कहीं-कहीं खम्भों पर बिजली का प्रकाश। प्रकृति का गुप्त सौंदर्य। जवाहरलाल का कलाकार हृदय जाग उठता है—"सौंदर्य की आत्मा, तुम्हारी ज्योति तो आकाश में छमक रही है; तुम दीपक की नन्ही-सी लौ में कैसे छिप जाती हो ?"

जवाहरलाल अपने सोने के कमरे की ओर बढ़ते हैं। हाथ में प्रसिद्ध पत्रकार लुई फ़िशर की नयी पुस्तक है।

कमरे में सामने गांधी जी का चित्र टंगा है—क्षण-भर उसे देखते हैं। फिर निगाह मेज की ओर बढ़ती है—वहां भगवान बुद्ध की करुणा-मूर्ति है—"मैं उस पथिक की पगध्वनि सुनता हूं, अपने इस समुद्र-तट से।"

जवाहरलाल फिर अपने विचारों में खो जाते हैं। दिन-भर जो दौड़ता रहा और जिसके पीछे इतनी भीड़ दौड़ती रही, अब यह अकेला है, निपट अकेला—महात्मा गांधी के चित्र और भगवान बुद्ध की करुणा-मूर्ति के बीच मेज पर भगवद्गीता है—कर्मयोग का सादेश देने वाली।

जवाहरलाल खिड़की से बाहर देखते हैं—नक्षत्रों से भरा रहस्यमय आकाश।

यात्री थक गया है। पथ अनन्त है। आज की यात्रा काफ़ी लम्बी रही; कल सुबह फिर उठना है और यात्रा पर चलना है। आज जहां तक चले, कल उससे आगे चलना है।

सो जाओ! ओ अनन्त पथ के पथिक! निद्रा देवी अपनी बांहें फैलाए तुम्हारी प्रतीक्षा में है। कल का विहान भी तुम्हारी

सो जाओ, सो जाओ! कल फिर यात्रा

सो जाओ! भारत माता के स

१३

मित्रघात और लम्बी यात्रा की थकान

अनन्त पथ सामने था और जवाहरलाल शान के साथ चले जा रहे थे। वे जीवन के ७२ वर्ष पूरे कर ७३वें वर्ष में पदार्पण कर रहे थे, लेकिन कहीं भी थकान का नाम नहीं, आराम नहीं। वही स्फूर्ति, सजग मस्तिष्क और युवकों जैसी गति। केवल चार-पांच घण्टे की नींद और बाकी समय देश के लिए, देश-वासियों के लिए, विश्व के लिए, विश्व-शान्ति के लिए।

नेहरू जी ने संयुक्त राष्ट्र महासभा में जोरदार शब्दों में कहा था कि दुनिया में सह-अस्तित्व और सहयोग बढ़ाने के लिए 'अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग वर्ष' मनाया जाना चाहिए। तब विश्व के नेताओं ने निर्णय किया कि शान्ति-दूत नेहरू जीवन के ७५ वर्ष पूरे करेंगे, तब यह 'अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग वर्ष' मनाया जाए।

लेकिन इस दुनिया में स्वार्थलोलुपों की कमी नहीं।

२० अक्तूबर १९६२ का वह अनाहूत दिन। चीन ने अपनी विशाल सेना लेकर भारत की उत्तरी सीमा पर अचानक हमला कर दिया। मित्रघात का इतना बड़ा उदाहरण दुनिया के इतिहास में शायद ही कहीं मिले।

यह वही चीन था, जहां कम्यूनिस्ट शासन के स्थापित होते ही, दिन १ अक्तूबर, १९४९ को सबसे पहले भारत ने मान्यता दी थी। अनेक देश उसके विरुद्ध थे, फिर भी भारत ने उसकी ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया था। यही नहीं, बल्कि संयुक्त राष्ट्र में भी भारत बराबर अपनी आवाज बुलन्द कर रहा था कि संयुक्त

राष्ट्र में चीन को भी स्थान मिले। यह वही चीन था जिसके साथ भारत ने सबसे पहले पंचशील पर हस्ताक्षर किए थे। यह वही चीन था, जिसके प्रधानमंत्री चाऊ-एन-लाई का भारत में अभूतपूर्व स्वागत हुआ था और भारतीय जनता ने 'हिन्दी-चीनी भाई-भाई' के नारे लगाए थे। यह वही चीन था जिसने जवाहरलाल जी का अपने देश में शानदार स्वागत किया था और मित्रता का दावा किया था।

उसी चीन ने २० अक्तूबर १९६२ को अचानक भारत पर हमला कर दिया। नेहरू जी को लगा कि उनके साथ धोखा हुआ है; उनकी पीठ में छुरा घोंपा गया है। फिर भी उन्होंने अपना संतुलन नहीं खोया।

उन्होंने दुनिया के सभी देशों के प्रधानमंत्रियों तथा राष्ट्रपतियों को लिखा—"यह बड़े शोक की बात है कि चीनियों ने भारत की नेकी का जवाब बुराई से दिया है। जब से हमारा देश स्वतंत्र हुआ, हमारी नीति बराबर चीन के साथ मित्रता और अच्छे सम्बन्ध रखने की रही है और हमने दुनिया की परिषदों में चीन का पक्ष लिया है। मगर दुख है कि बदले में चीन ने हमसे शत्रुता ही नहीं, बल्कि छल और कपट का व्यवहार किया है।"

यह एक ऐसे व्यक्ति की वाणी थी, जिसके साथ गहरा विश्वासघात हुआ था; जो अपमान के कड़वेपन को मन-ही-मन महसूस कर रहा था, लेकिन उसका उबाल बाहर नहीं आने देना चाहता था; जो इतना बड़ा धोखा खाने के बाद भी संयत था।

२२ अक्तूबर को नेहरू जी ने रेडियो से भारत की जनता के नाम संदेश दिया—"....हिन्दुस्तान ने खास तौर से कोशिश करके दोस्ती की और सहयोग किया चीनी हुकूमत से, वहां के लोगों से; और उसकी तरफ से दुनिया की अदालतों में वकालत की; ... चीनी सरकार ने हम ... [illegible] ...ाव दिया बुराई

हां तक कि वह हमारे मुल्क पर हमलावर हुई और उसने हिस्सों पर कब्जा किया । कोई भी खुद्दार मुल्क इसको नहीं कर सकता ; न इसको पसन्द करेगा। जाहिर है कि तान, जिसके लोग आजादी से मुहब्बत करते है, कभी भी नीचे सिर नही झुका सकते, चाहे कुछ भी नतीजा हो···।"

धानमंत्री नेहरू के इस आवाहन से समस्त भारत एक होकर का सामना करने के लिए तैयार हो गया। जातिभेद, , भापाभेद आदि सब मामूली झगड़े भुला दिए गए। क व्यक्ति देश की आजादी के लिए बलिदान होने को हो गया। देश का नेतृत्व नेहरू के हाथ में था और देश का बच्चा नेहरू के इशारे पर सिर कटाने को तैयार था।

ल्ली के रामलीला मैदान में विशाल सार्वजनिक सभा में जी ने कहा—"आजादी हमें प्यारी है। हम आजादी के ड़ने को तैयार हैं ; आजादी पर कोई हमला हो तो हर स पर न्योछावर होने के लिए तैयार है··· "

र वर्ष का वृद्ध कर्मयोगी और शान्तिप्रेमी अब आहत शेर ह दहाड़ रहा था और सारा देश उसके इशारे पर मातृ- के लिए न्योछावर होने को तैयार हो रहा था।

रत पर आक्रमण हुआ है—इस समाचार से सारे संसार का मच गया। शान्तिप्रिय देश भारत, शान्ति-दूत नेहरू रत—उस पर कोई देश आक्रमण कर दे, यह आश्चर्य की थी।

मेरिका और ब्रिटेन ने तुरन्त सहायता भेजी; अनेक देशों ने भर्त्सना की, और तटस्थ राष्ट्रों ने तुरन्त सम्मेलन बुलाया। चीन ने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि इतने देश भारत हायता के लिए तैयार हो जाएंगे, इतने देश भारत की

प्रशंसा और चीन की भर्त्सना करेंगे। चीन ने अचानक हमला किया था और उसे आशा थी कि वह भारत के थोड़े-से सिपाहियों का मार-काटकर आगे बढ़ता चला जाएगा ; लेकिन भारत के वीर जवानों ने लद्दाख में चुशूल तथा नेफा में वालोंग के मोर्चे पर उनके दांत खट्टे कर दिए। इन मोर्चों पर चीन को लेने के बदले देने पड़ गए। तब उनकी आंखें खुलीं और २१ नवम्बर की अर्धरात्रि को उसने अचानक युद्ध-विराम की घोषणा कर दी।

लेकिन उसके मित्रघात ने, उसकी धोखेबाजी ने नेहरू जी को पस्त कर दिया। जो ७२-वर्षीय नेहरू एक-एक कदम में दो-दो सीढ़ियां चढ़ते थे, जो बच्चों के साथ दौड़ लगाते थे, वही अब कन्धे झुकाए, माथे पर बल डाले चलने लगे थे।

जनवरी, १९६४ में भुवनेश्वर (उड़ीसा) में कांग्रेस-अधिवेशन चल रहा था। नेहरू जी हमेशा की तरह उसमें भाग ले रहे थे। ७ जनवरी को वहीं यकायक उनके शरीर के दाहिने भाग में पक्षाघात का आक्रमण हो गया। जिसने हमेशा 'आराम हराम है' का नारा लगाया था, उसी को बाध्य होकर आराम करना पड़ा।

कुछ दिन बाद वे ठीक हो गए और दिल्ली वापस लौट आए। डाक्टरों तथा शुभचिन्तकों के बार-बार मना करने पर भी वे कर्मयोगी की तरह फिर अपने काम पर जुट गए। वे अस्वस्थ थे, फिर भी भंगालोटन गए, बम्बई गए, दिल्ली में अनेक समारोहों में गए, अनेक व्यक्तियों से मिले और उनसे अनेक समस्याओं पर बातें कीं, कार्यालयों में अनेक कागजात देखे और उन पर अपनी टिप्पणियां लिखीं।

लेकिन शरीर, उम्र और काम के बोझ से शिथिल होता चला गया। उन्हें आराम करने को कहा गया। वे न माने। फिर किसी प्रकार उन्हें ४ दिन आराम करने देहरादून जाने के लिए तैयार किया गया।

२३ मई, १९६४ की सुबह। देहरादून के पोलोग्राउण्ड में स्त्री-पुरुषों और बच्चों की भीड़ लग गई। आज फिर उनके हृदय-सम्राट अपनी सुपुत्री इन्दिरा के साथ ४ दिन के लिए देहरादून आने वाले थे।

हेलिकॉप्टर ने धीमे-से पोलोग्राउण्ड की जमीन छुई। 'चाचा नेहरू जिन्दाबाद' के नारों से आसमान गूंज उठा। सिर पर श्वेत टोपी, टोपी के किनारे-किनारे श्वेत बाल, श्वेत अचकन और अचकन के बटन-होल में मुस्कराता लाल गुलाब, श्वेत चूड़ीदार पाजामा। चेहरे पर तेज, लेकिन उस तेज में थकन की हल्की-हल्की रेखाएं।

पोलोग्राउण्ड से सर्किट हाउस तक रास्ते-भर स्त्री-पुरुषों की भीड़। बच्चों द्वारा फूलों की वर्षा और 'चाचा नेहरू जिन्दाबाद' के नारे। चाचा नेहरू बच्चों के बीच आ गए, बच्चे बन गए, चेहरा फिर गुलाब की तरह मुस्कराने लगा।

२४ मई की सुबह। हाथ में ताजा गुलाब लिए नेहरू जी लॉन में खड़े मुस्करा रहे थे और उनके स्वस्थ खिले चेहरे को देखकर लोग कह रहे थे, "इस युवक को वृद्ध कहने वाला झूठा है। ये तो चिर-यौवन के प्रतीक हैं, हृदय-सम्राट हैं।"

दिन मे नेहरू जी अपने कुछ मित्रों से मिले, फिर आराम किया, फिर निजी सचिव को कुछ पत्र लिखाए और कुछ दफ्तरी काम किया।

शाम को श्रीप्रकाश जी उनसे मिलने सर्किट हाउस पहुंचे। श्रीप्रकाश जी, जो नेहरू जी से केवल ६ महीने छोटे थे, जो लन्दन से ही नेहरू जी से परिचित थे और भारत आने पर भी अनेक आन्दोलनों में साथ रहे। वे जब मिलने आए तो उन्हें नेहरू जी का स्वास्थ्य देख बहुत दुख हुआ।

उन्होंने कहा, "जवाहरलाल, मैंने पहले कभी भी तुम्हें ऐसी हालत में नहीं देखा था और न इसकी कल्पना कर सकता था। मुझे तो रोना आता है।"

यह कहते-कहते श्रीप्रकाश जी की आंखों से आंसू की दो बूंदें चू पड़ीं।

फिर बहुत-सी पुरानी बातें याद आईं। और जब श्रीप्रकाश जी चलने को हुए तो नेहरू जी उनका निवासस्थान देखने चल दिए।

खूबसूरत जगह पर छोटी-सी कुटिया देख नेहरू जी को खुशी हुई। बगीचा देखा, पुस्तकालय देखा, जलपान किया।

जब जाने को हुए तो श्रीप्रकाश जी ने मिन्नत के स्वर में कहा, "जवाहर, क्यों नहीं इन अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का बोझ कम कर देते! यदि ऐसा करोगे तो मेरी तरह सीधे खड़े रह पाओगे।"

नेहरू जी केवल मुसकराकर रह गए। जाते समय दोनों गले मिले। नेहरू जी ने उन्हें अपनी बाहों में कस लिया—जाने क्यों!

२१ मई की सुबह। नेहरू जी लॉन में बैठे उसी तरह मुस्कराते रहे। बच्चे फूल दे जाते तो कहते, 'धन्यवाद!'

शाम को घूमने निकले। सहस्रधारा गए और प्रसन्नचित्त लौटे।

फिर २६ मई, १९६४। दोपहर को आराम करने के बाद शाम को नर-नारियों के अगाध समुद्र के बीच से होती हुई उनकी कार पोलोग्राउण्ड पहुंची। हेलिकॉप्टर खड़ा था। नेहरू जी उसमें बैठे। सामने अपार जनता को देख मुस्कराए।

'पण्डित नेहरू जिन्दाबाद' के गगनभेदी नारों से पूरा देहरादून

गूंज उठा। अनेक हाथ, अनेक रूमाल हिलने लगे। पौने पांच बजे विमान घरघराया, कुछ सरका, फिर उठा और उठता चला गया। हाथ और रूमाल हिलते रहे, 'पण्डित नेहरू जिन्दाबाद' के नारे लगते रहे—लगते रहे।

१४
काल की छाया…तीन मूर्ति की ओर

२६ मई की रात। नेहरू जी अपनी सुपुत्री इन्दिरा के साथ दिल्ली पहुंचे। श्री लालबहादुर शास्त्री आदि नेताओं ने उनका स्वागत किया। वे प्रसन्नचित्त और तरोताजा लग रहे थे।

रात के खाने के बाद वे काफी देर तक अपने कार्यालय में काम करते रहे।

"मैंने सब फाइलें निपटा दी है।" उन्होंने अपने सहायक से कहा और विश्राम करने चल दिए। कौन जानता था कि यही उनका अन्तिम विश्राम था!

और…२७ मई, १९६४ की वह मनहूस सुबह। ६ बजकर २० मिनट पर उन्होंने इन्दिरा जी को बताया कि उनकी पीठ में दर्द हो रहा है। डाक्टरों को तत्काल फोन किया गया। लेकिन उनके आने से पहले ही नेहरू जी बेहोश हो गए।

काल की छाया तीन मूर्ति भवन की ओर बढ़ी आ रही थी; डाक्टर भरपूर शक्ति से उसे रोकने का प्रयत्न कर रहे थे; लेकिन विधना पर किसका बस?

काल ने अपने विशाल पंख फैला दिए थे। मानव की विवशता पर नियति मुस्करा रही थी। काल ने उस थकित मानव को अपने अंक में ले लिया था।

जिस महामानव को हमने एक क्षण भी आराम नहीं करने दिया था, अब वही महामानव काल के अंक में लेटकर अनन्त विश्राम कर रहा था। कितना थक गया था वह, कि एक बार जो सोया तो फिर कभी आंखें नहीं खुली।

ढाई बजे तक दुनिया के कोने-कोने में समाचार फैल गया।

सारा संसार स्तब्ध था। शान्ति का दूत चला गया था; मानव-मुक्ति का मसीहा इस संसार से उठ गया था; एक महान विचारक, महान राजनीतिज्ञ, महान जन-सेवक, महान कलाकार और साहित्यिक, महान कर्मयोगी अनन्त निद्रा में निमग्न हो गया था। देश के इतिहास का एक युग समाप्त हो गया था; दुनिया के इतिहास का एक अध्याय पूरा हो गया था।

देश-विदेशों में शोक की लहर फैल गई थी। बड़े-बड़े नेता, दार्शनिक, वैज्ञानिक शोक में डूब गए थे। तीन मूर्ति का वह प्रांगण मंत्रियों, राजदूतों, संसद-सदस्यों, कलाकारों, किसानों, मजदूरों, स्त्रियों, बच्चों, वृद्धों से भर गया।

भारत के सभी नगरों में शोक का वातावरण छा गया, कार्यालय बन्द हो गए, दुकानें बन्द हो गईं, सिनेमा बन्द हो गए। सर्वत्र कुहराम मच गया। उस महामानव के अन्तिम दर्शन करने के लिए आने वालों से रेलगाड़ियां भर गईं, विशेष विमान दिल्ली की ओर आने लगे; अनेक कारें, ट्रक, बसें खचाखच भरकर दिल्ली की ओर चल पड़ी।

विदेशों से अनेक बड़े-बड़े नेता इस महामानव को अन्तिम श्रद्धांजलि अर्पित करने दिल्ली की ओर रवाना हो गए; सभी देशों के झण्डे झुका दिए गए; राष्ट्रों के प्रधानों से शोक-संवाद

और जाने क्यों, हर बार लगता है कि धरती भी डगमगा जाएगी।

क्यों ?

क्योंकि जितना प्रेम तुमने इस जनता को दिया और जितना प्रेम इस जनता ने तुम्हें दिया, उतना प्रेम न कोई पा सका है और न पा सकेगा। तुम जो मरने के बाद भी इस भारत की मिट्टी का अंग बन जाना चाहते हो, तुम जो चाहते हो कि तुम्हारी कुछ भस्म गंगा में डाल दी जाए, जिससे वह भारत-माता के चरण पखारने वाले समुद्र में मिल जाए, और कुछ भस्म विमान से बिखेरी जाए, जिससे वह भारत के खेतों की उस मिट्टी में मिल जाए, जिसमें किसान मेहनत करते हैं।

ऐसी वसीयत किसने की होगी इस दुनिया में ? किसने आज तक लिखा कि उसकी भस्म को उन खेतों में मिला दिया जाए जिसमें किसान मेहनत करते हैं ? केवल तुमने लिखा, इसीलिए तो भारत का बच्चा-बच्चा तुमसे इतनी मुहब्बत करता है !

१५
कारवां गुजर गया...

काल-रात्रि अपना आहार कर अब पंख समेटने ल
आसमान के झिलमिलाते तारे धीरे-धीरे ओझल होते जा
भोर होने लगी है।

२८ मई, १९६४ की भोर।

अनेक विमान दिल्ली पहुंच चुके हैं, अनेक पहुंचने व
अनेक रेलगाड़ियां, ट्रक, कारें, बैलगाड़ियां आ चुकी हैं,

ने वाली हैं। अन्तिम दर्शन करने वालों की लाइन उसी तरह ी हुई है। भीड़ बढ़ती जा रही है।

पूरब से सूर्य झाकने लगा है। हीरालाल माली फिर सामने गया है। सुबक रहा है, आंसुओं की धारा बह रही है, नहरू के चरणों में गुलाब रखते हुए कह रहा है—"पण्डित जी, ाब की कली लाया हूं।" लेकिन धन्यवाद के रूप मे उसे ण्डित जी की जो मोहक मुस्कान मिलती थी, वह आज क्यों ी मिली? क्यों? माली जोर से रो पड़ा है, हाथों मे मुह पाए वहा से हट गया है, दूर चला गया है, डर रहा है, उसके न से कही पण्डित जी का नीद न खुल जाए।

धूप तेज होने लगी है। भीड़ बढ़ती जा रही है। 'चाचा हरू जिन्दाबाद' और 'नेहरू अमर है', नारे लगते जा रहे हैं। व को ले जाने की तैयारी होन लगी है। नेहरू जी के इस पार्थिव रीर को जमुना के उसी किनारे ने जाया जाएगा, जहा १६ ं पहले राष्ट्रपिता महात्मा गाधी के पार्थिव शरीर को ले जाया या था। जमुना के इस ओर एक तरफ राष्ट्रपिता गाधी को माधि है—राजघाट, और दूसरी तरफ भारत माता के लाडले पूत की समाधि बनेगी—शान्तिघाट। स्वतंत्रता-संग्राम मे दोनो ाथ-साथ रहे और अब दोनो की समाधियां भी साथ-साथ रहेगी।

११ बज चुके है। तैयारी हो रही है। नर-नारी व्याकुल होते ा रहे हैं। धूप तेज होती जा रही है।

११॥ बज गए हैं। तोपगाड़ी पहुंच चुकी है। इसी से नेहरू जी े पार्थिव शरीर को ६ मील दूर शान्तिघाट ले जाया जाएगा।

११ बजकर ' ४४ मिनट '' धरती डगमगा रही है। पूरा भवन ांप उठा है। लोग एक-दूसरे को देख रहे हैं। यह क्या है? भूकम्प? हा, भूकम्प!

जब इस धरती से कोई महान आत्मा उठती है, तो इसी

प्रकार धरती कांपती है।

तीन मूर्ति के आगे लाखों की भीड़ जमा है ; लाखों लोग मील लम्बे रास्ते पर खड़े हैं ; लाखों लोग शान्तिघाट पहुंच चुके हैं।

राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन, उपराष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन, मन्त्रिमण्डल के सदस्य, अनेक राज्यों के राज्यपाल और मुख्य-मंत्री, अनेक दलों के नेता, संसद सदस्य, वैज्ञानिक, कलाकार, साहित्यकार, मजदूर, किसान—सब बेचैन दिखाई दे रहे हैं।

विदेशों से ब्रिटेन के प्रधानमंत्री लार्ड ह्यूम, लंका की प्रधानमंत्री श्रीमावो बण्डारनायके, नेपाल के प्रधानमंत्री डा० तुलसीगिरि, यूगोस्लाविया के प्रधानमंत्री पीटर्स स्ताम्बौलिक, संयुक्त अरब गणराज्य के उपराष्ट्रपति श्री हुसैनशफी, पाकिस्तान के विदे मंत्री श्री जुल्फिकार भुट्टो, ईरान के गृह-मंत्री डा० जवाद सद ब्रिटेन की रानी के प्रतिनिधि लार्ड माउण्टबेटन आदि सैकड़ों लो पहुंच चुके है—शान्ति-दूत नहरू को अन्तिम विदाई देने।

यह शरीर बड़ा कृतघ्न है। प्राणवायु के निकलते ही यह पाषाण-शिला की तरह निश्चेष्ट हो जाता है। लाख प्रयत्न करो, क्षण-भर को भी नहीं जागता, एक अंग तक हरकत नहीं करता। जो अपनी अचकन पर एक गुलाब लगाता था, आज शोकग्रस्त लोगों ने उस पर करोड़ों गुलाब बिखेर दिए है, फिर भी वह चुप है, शान्त, निश्चेष्ट। जनता को देख वह कैसा मुस्कराता था, बच्चों के बीच कैसा खिलखिलाता था, बूढ़ों के बीच किस शालीनता से बोलता था, अव्यवस्था देख किस तरह भड़क जाता था! वह जनता का प्यारा, बच्चों का चाचा, बूढ़ों का जवाहर आज शान्त है, बिल्कुल चुप!

हमे ... था और जनता सुनती थी, आज जनता

बोल र

लग रहा है कि अभी बोल देगा। यकायक उठकर आंसुओं से भीगी, क्रन्दन करती, इधर से उधर भटकती जनता के बीच अपनी छड़ी लेकर पहुंच जाएगा और अपनी चिरपरिचित तुनक मिज़ाजी में आकर कहेगा, "यह क्या बदतमीज़ी है! ज़रा आंख लग गई थी, सोने भी नहीं दिया। हटो, भागो यहां से, यह क्या कुहराम मचा रखा है?"···और फिर स्त्रियों की नम आंखें, वृद्धों के गालों पर पड़ी रेखाएं और बच्चों के मासूम चेहरे देखकर यकायक चुप हो जाएगा और फिर मुस्कराकर कहेगा, "भई, माफ़ करना, अनुशासन मुझे बहुत प्रिय है। उसे टूटते देख मैं कभी-कभी अनुशासन से बाहर हो जाता हूं।"···और फिर जनता हंस पड़ेगी···और फिर वह भी खिलखिलाने लगेगा।

लेकिन नहीं, यह असम्भव है। शरीर बड़ा कृतघ्न है। प्राण-वायु के निकलने ही वह पाषाण-शिला की तरह निश्चेष्ट हो जाता है।

पूरी तैयारी हो चुकी है। १ बजकर १० मिनट हो गए हैं। सैनिक-बैंड से शोकधुन बज रही है, पण्डितगण मन्त्रोच्चारण कर रहे हैं। नेहरू जी का शव तोपगाडी पर रख दिया गया है। सिर खुला है, बाकी शरीर तिरंगे झण्डे से ढंका है और उसके ऊपर अनगिनत फूल बिखरे हैं।

शव-यात्रा आरम्भ हो गई है। रास्ते के दोनों ओर सैनिक हथियार उल्टे करके खड़े हैं। आगे क्षेत्रीय कमाण्डर की जीप है, फिर पायलेट हैं, उनके पीछे शव को उठाए तोपगाड़ी, उसके पीछे खुली कार में इन्दिरा जी और उनके पुत्र संजय और उनके बाद कारों का काफ़िला।

तीन मूर्ति का मुख्यद्वार। द्वार के बाहर जनता का अपार सागर। सड़कें, पेड़, मकान की छतें, सब जगह लोग-ही-लोग।

१ बजकर ३० मिनट हो गए हैं। तोपगाड़ी द्वार को प कर बाहर निकल रही है। जनता भारी शोक में क्रन्दन कर उ है। लोग सिसकियां भर रहे हैं; बिलख-बिलखकर रो रहे 'जवाहरलाल नेहरू अमर हों' के नारे लगा रहे हैं।

कल बादल छाए थे। आज वे न जाने किस कोने में छिप सिसक रहे होंगे। सूर्य एकटक देख रहा है धरती के इस सूर्य के ज्योति-पुंज को। आज अन्तिम दिन है कल से नहीं दिखाई देगा आकाश का सूर्य इस अन्तिम दर्शन का एक क्षण भी नहीं खोना चाहता। एकटक देख रहा है।

कड़कती गर्मी पड़ रही है, फिर भी कोई टस-से-मस नहीं होता। लगता है मानो राजधानी का समस्त जीवन आज एक ही रास्ते पर आकर जम गया है. उस रास्ते पर जहां से उसका प्रिय जवाहर अन्तिम यात्रा कर रहा है।

मानवों के इस अथाह सागर के बीच से अर्थी बढ़ती जा रही है, धीरे-धीरे। 'चाचा नेहरू जिन्दाबाद', 'पण्डित नेहरू अमर हों' के नारों के बीच तोपगाड़ी के ऊपर शान्त मुद्रा में लेटा वह महामानव चला जा रहा है'''नहीं, ले जाया जा रहा है—अन्तिम यात्रा पर।

जो एक-एक दिन सैकड़ों मील चलता था, कभी विमान पर कभी रेलगाड़ी में, कभी कार में, कभी बैलगाड़ी पर, कभी पैदल, जो पैदल भी इतनी तेज चलता था कि साथ चलने वाले पिछड़ जाते थे, जो एक-एक डग में दो-दो सीढ़ियां लांघता था, आज वह तोपगाड़ी पर शान्त लेटा था और सेना के ६० जवान उसे खींच रहे थे। विधि की कितनी बड़ी विडम्बना है यह!

तीन मूर्ति से विजय-चौक केवल एक मील है। जन-सागर के बीच से होती हुई यह अर्थी पूरे ५० मिनट में यहां पहुंची है।
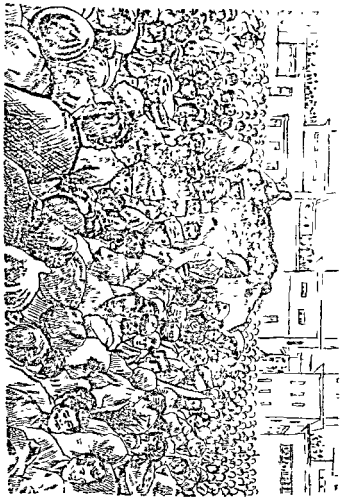
यह वही स्थान है जहां हर साल गणराज्य-दिवस-समारोह में लाखों लोग नेहरू जी के दर्शन करते थे, उन्हें चलते-फिरते, हंसते-खिलखिलाते देखते थे, आज भी लाखों लोग यहां उनके दर्शनों के लिए खड़े हैं। अन्तर केवल इतना है कि आज वे चलेंगे नहीं, खिलखिलाएंगे नहीं।

अर्थी राजपथ से गुजर रही है। दोनों ओर लाखों की भीड़ है। कड़कड़ाती धूप, अपार जनसमूह। स्त्रियां रो रही हैं, बच्चे बिलख रहे हैं, अनुशासन टूट चुका है। अर्थी के पीछे लाखों लोग पागलों की तरह भागते चले जा रहे हैं। 'चाचा नेहरू जिन्दाबाद', 'पण्डित नेहरू अमर हैं' के नारे लग रहे हैं। अर्थी पर फूलों की वर्षा हो रही है, आंखों से गंगा-जमुना बह रही है, भीड़ के रेले में पैर लड़खड़ा रहे हैं, अनेक मूर्च्छित हो गए हैं, अनेक फफक-फफककर रो रहे हैं, अनेक पागलों की तरह अर्थी के पीछे-पीछे भाग रहे हैं।

लेकिन एक वह है, जो खामोश लेटा है, २० लाख व्यक्तियों की इस भीड़ को देखकर भी उठता नहीं, जागता नहीं, मुस्कराता नहीं। शान्त, गम्भीर चेहरा, लेकिन वही आकर्षण। लगता है कि अभी बोल देगा।

"अरे, उसका सिर तो ढक दो ! कितनी गर्मी पड़ रही है।" एक बुढ़िया की ममता जाग उठी है।

"माँ, अब क्या गर्मी क्या सर्दी ! हंस उड़ गया है, मिट्टी बची है।" बगल में खड़ा एक व्यक्ति कहता है।

बुढ़िया उसकी ओर देखती है, उसकी वेदनामय मुस्कान देखती है और फफक-फफककर रो पड़ती है, "नहीं-नहीं, ऐसा न कहो ! ऐसा न कहो !"

सारे जनसमूह में शोक की लहर दौड़ जाती है, क्रन्दन से वातावरण क्षुब्ध हो उठता है, आंसुओं से धरती गीली हो

जाती है।

अर्थी आगे बढ़ती जा रही है, राजपथ से इण्डिया गेट, फिर तिलक मार्ग, मथुरा रोड, इन्द्रप्रस्थ मार्ग, रिंग रोड होती हुई राजघाट पहुंच गई है। यह वह स्थान है जहां १६ वर्ष पहले राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के पार्थिव शरीर को हमने आग के शोलों के हवाले किया था। आज उसी के निकट राष्ट्र-निर्माता नेहरू को उसी तरह आग के शोलों के हवाले करना है! शोक-सन्तप्त जनता 'पण्डित नेहरू अमर हैं' नारे लगा रही है, ऊपर से हेलिकॉप्टर गुलाब के फूलों की वर्षा कर रहा है और अर्थी बढ़ती जा रही है।

लाल चबूतरा, ५ फुट ऊंचा और १६ फुट चौरस। चबूतरे पर १० मन चन्दन की लकड़ियां। ३ घण्टे में ६ मील की शव-यात्रा सवा चार बजे शाम को समाप्त हो गई है। नेहरू जी का पार्थिव शरीर चिता के ऊपर रख दिया गया है। पण्डितगण वेद-मंत्रों का उच्चारण कर रहे हैं। गंगाजल छिड़का जा रहा है, रेशमी चादरें चढ़ाई जा रही हैं, गुलाब और गेंदे के फूल अर्पित किए जा रहे हैं। ५ लाख जनता आंसू पोंछती हुई, सिसकियां लेती हुई इस मर्मभेदी दृश्य को चुपचाप देख रही है।

बड़े-बड़े नेता शव के पास आकर अन्तिम प्रणाम कर रहे हैं। बहन विजयलक्ष्मी पण्डित अपने लाडले भाई को इस तरह लकड़ियों के ऊपर लेटा नहीं देख सकीं हैं, अन्तिम प्रणाम करने के लिए चबूतरे पर जाते ही फफक-फफककर रो पड़ी हैं और हाथों से मुंह छिपाए लौट आई हैं।

घाघरा-ओढ़नी पहने एक प्रौढ़ा स्त्री केसर देवी आंखों में आंसू और हाथ में शुद्ध घी का छोटा-सा पीपा लिए चली आ रही है। वह अपने प्रिय नेता से कभी मिली थी। आज सीधे अपने

गार मे चली आई है, अन्तिम बार मिलने, आते ति
चिता पर घी चढ़ाने। जमना मे एक बार फिर मोड़
दौड़ गई है। फेनर देवी मे घी का पीपा लेकर चिता पर
दिया गया है।

४ बजकर ३७ मिनट हो गए हैं। संजय ने चिता में
प्रज्ज्वलित कर दी है।

सैनिकों ने अन्तिम विदाई के लिए गोलियां दाग दी
बिगुल वाले शोक-धुन बजा रहे हैं। वहीं पढ़ने हुए अ
अन्तिम सलामी दे रहे हैं।

अग्नि प्रज्ज्वलित हो गई है। चिता धू-धू कर जलने लगी है
समस्त जनता व्याकुल हो उठी है। फूलों का राजकुमार आ
आग के शोलों के बीच सुलग रहा है, जल रहा है। जनता
पागल हो रही है, जोर-जोर से रो रही है, और 'नेहरू अमर
है', 'नेहरू जिन्दाबाद' चिल्ला रही है।

माउण्टबेटन बड़े दुखी स्वर में रुक रुक कर कह रहे हैं, "मेरा यह
दुर्भाग्य रहा है कि मुझे भारत की दो महान आत्माओं—
महात्मा गांधी और पण्डित नेहरू—की अन्त्येष्टि देखनी पड़ी
है।"

अग्नि की लपटों ने राष्ट्रनायक, शान्ति-दूत, भारत-माता के
लाड़ले जवाहर का पवित्र शरीर अपनी बांहों में भर लिया है।
हंस कल उड़ चुका था। मिट्टी बची थी। आज वह मिट्टी
... भूत में मिल गई।